वन सन्देश

जुलाई-दिसम्बर : 2012
वर्ष : 45 अंक : 2

प्रकाशक : श्री आर.के. गुप्ता, भारतीय वन सेवा
प्रधान मुख्य अरण्यपाल, हिमाचल प्रदेश

वन विभाग हिमाचल प्रदेश

वन विभाग हिमाचल प्रदेश

हमारी परिकल्पना :

वन विभाग हिमाचल प्रदेश वानिकी क्षेत्र में उत्कृष्ठ संस्थान बनने के लिए प्रतिबद्ध है। जन, पर्यावरण, विकास एव संरक्षण के मध्य समायोजन रखते हुए समाज एवं देश सेवा हमारा संकल्प है। भागीदार के रूप में कार्य करते हुए हिमालय की विशिष्ट जैव–विविधता को भविष्य के लिए सुरक्षित और सुव्यवस्थित रखने का आश्वासन देते हैं। रचनात्मक एवं परिवर्तनगामी, हम एक सर्वोतम वानिकी सेवा के रूप में उभरना चाहते हैं।

हमारा ध्येय :

- प्राकृतिक संसाधनों का भावी पीढ़ियों के लिए प्रभावी प्रबन्धन करना तथा वनों और वन्यप्राणियों के संरक्षण एवं प्रबन्धन में सुधार लाते हुए उनकी गुणवत्ता में बढ़ौतरी करना।
- वनों पर निर्भर समुदायों की आवश्यकताओं और आजीविका का पोषण करना।
- सतत वन प्रबन्धन हेतु समुचित संसाधनों को सुनिश्चित करना।
- सुचारू एवं प्रभावी सुरक्षा प्रक्रिया द्वारा जैव विविधता का संरक्षण तथा संचय।
- वनों और वन्य जीवों के पर्यावरण में योगदान का आंकलन करना तथा मान्यता देना।

हमारी मूल मान्यताएं

- हम व्यवसायिक और नैतिक मूल्य पर आधारित परिणामी प्रबन्धन करते हैं।
- हम सुअवसर की खोज, चुनौतियों का सामना और बदलती परिस्थितियों में स्वयं को ढालने की क्षमता रखते हैं।
- हम वनों के बहुमुखी उपयोग की तरफ सजग रह कर दीर्घकालीन पारिस्थितक संवेदनशीलता रखते हैं।
- हम हर कार्य में गुणवत्ता और श्रेष्ठता के लिए प्रयासरत्त हैं तथा लोगों व संसाधनों के प्रति लिए गए निर्णयों के प्रभाव के प्रति जागरूक रहते हैं।
- हम एक समर्पित, बहुदक्ष तथा उत्कृष्ट व्यवसायिक टीम हैं जो सामूहिक रूप से कार्य करने में विश्वास रखते हैं।
- हम निष्पक्षता, अनुशासन और सत्यनिष्ठा से कार्य करते हैं ।
- हम स्थानीय लोगों की आकांक्षाओं का सम्मान करते हैं तथा उन्हें योजना से लेकर कार्यान्वयन तक शामिल करने का प्रयास करते हैं।
- हम सतत वन प्रबन्धन में अपने समस्त स्टेकहोल्डरों/पणधारियों को पूरी मान्यता देते हैं।
- हम अपने उत्तरदायित्व के प्रति पूर्णतः सजग हैं।
- हम अपने दायित्वों के निर्वाह करने में कानून, नियमों व अधिनियमों का पालन करते हैं।

माननीय मुख्यमंत्री
हिमाचल प्रदेश

संदेश

एलर्ज़ली
शिमला–171 002

हिमाचल प्रदेश सरकार

प्रिय प्रदेशवासियो,

वन संदेश के माध्यम से आपको सम्बोधित करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है।

प्रदेश के वन हिमालय क्षेत्र के नाजुक पर्यावरण को संतुलित रखने के साथ–साथ, हमारी तथा हमारे पड़ोसी राज्यों की अर्थव्यवस्था में भी अहम भूमिका निभाते हैं। इसी के दृष्टिगत, हमने वानिकी विषय को सदैव प्राथमिकता के आधार पर लिया है। वन संरक्षण एवं विकास की दिशा में राजनैतिक इच्छाशक्ति का परिचय देते हुए, हमने बहुत पहले, वर्ष 1986 में, प्रदेश में हरे खड़े वृक्षों के व्यापारिक दोहन पर स्वयं पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया था। हमने ठेकेदारी प्रथा को पूर्णतः समाप्त किया और आज राज्य वन विकास निगम के माध्यम से वनों से केवल सूखे और गिरे–पड़े वृक्षों का दोहन किया जाता है। इस प्रकार हिमाचल प्रदेश सरकार, राष्ट्र के व्यापक हितों को ध्यान में रखते हुए अपने वनों का संरक्षण कर रही है।

आज, देश के अनेक भागों में, जहां वन क्षेत्र में कमी देखने को मिल रही है वहीं हमारे लिए यह संतोष का विषय है कि प्रदेश सरकार द्वारा समय–समय पर वानिकी विकास की दिशा में लिए गए नीतिगत निर्णयों, विभागीय प्रयासों तथा प्रदेशवासियों के सक्रिय सहयोग के फलस्वरूप पिछले दो दशकों (वर्ष 1991–2011) में हिमाचल प्रदेश का हरित आवरण 21.16 प्रतिशत से बढ़ कर 26.37 प्रतिशत हुआ है। भारतीय वन सर्वेक्षण संस्थान, देहरादून द्वारा सैटेलाईट से प्राप्त चित्रों तथा ज़मीनी सत्यापन के उपरांत प्रकाशित स्टेट आफ फारेस्ट रिर्पोट में भी इसकी पुष्टि की गई है। लेकिन इस दिशा में अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

हिमाचल प्रदेश सरकार वन रूपी प्राकृतिक धरोहर के संरक्षण एवं संवर्द्धन के प्रति प्रतिबद्ध है। मुझे पूरा विश्वास है कि प्रत्येक प्रदेशवासी भागीदार के रूप में कार्य करते हुए हिमालय की विशिष्ट जैव–विविधता सम्पन्न वनों को भविष्य के लिए सुरक्षित और सुव्यवस्थित रखने में अपना पूर्ण सहयोग देगा।

वन संदेश के सफल प्रकाशन हेतु मेरी ओर से अनेक शुभ कामनाएं।

(वीरभद्र सिंह)

माननीय वन एवं मत्स्य मंत्री
हिमाचल प्रदेश

संदेश

हिमाचल प्रदेश सरकार

बहनों और भाईयो,

वन संदेश के माध्यम से आपके समक्ष अपने विचार प्रस्तुत करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है।

हिमाचल प्रदेश के वन हिमालय की विशिष्ट जैव–विविधता को संजोए हैं, जिसका इस क्षेत्र के नाज़ुक पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने में विशेष महत्व है। भारतवर्ष में पाई जाने वाली लगभग पैंतालीस हज़ार वनस्पति प्रजातियों में से तीन हज़ार से अधिक प्रजातियां हमारे प्रदेश में पाई जाती हैं। पूरे विश्व में पाई जाने वाली फीजेंट की कुल बावन प्रजातियों में से सात प्रजातियां हमारे प्रदेश में विद्यमान हैं। हिमाचल प्रदेश उत्तरी भारत की पांच प्रमुख नदियों का जलग्रहण क्षेत्र है। इन नदियों में साफ तथा लगातार पानी की उपलब्धता बनाए रखने में हमारे वन विशेष भूमिका निभाते हैं। प्रकृति की इस अनुपम धरोहर के संरक्षण एवं विकास का इतना बड़ा दायित्व हमें सौंपा गया है, जिसे हमें पूरी जिम्मेवारी के साथ निभाना है।

प्रदेश की अधिकतर आबादी गांव में बसती है जो इमारती लकड़ी, बालन, चारा, जड़ी–बूटियों आदि की आवश्यकताओं के लिए आज भी वनों पर निर्भर है। प्रदेश के वनों से लोगों को प्रतिवर्ष इमारती लकड़ी, बालन, चारा, जड़ी–बूटियों आदि के रूप में लगभग 1100 करोड़ रू0 मूल्य के प्रत्यक्ष उपभोग योग्य लाभ प्राप्त होते हैं। हमारा हर संभव प्रयास है कि उपलब्ध वन संसाधनों का प्रभावी संरक्षण हो तथा नए वन लगाए जाएं ताकि पर्यावरण पर पड़ रहे दबावों को कम किया जाए और इनसे प्राप्त होने वाले लाभ भी हमें दीर्घकाल तक सतत रूप में प्राप्त होते रहें। इसके लिए राज्य, केन्द्र तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की अनेक वानिकी योजनाएं एवं परियोजनाएं सफलतापूर्वक चलाई जा रही हैं।

हमारा यह मानना है कि यदि प्रदेश को समृद्ध बनाना है तो हमें वनों पर निर्भर ग्रामीण समुदाय तथा पशुधन के समेकित विकास की ओर विशेष ध्यान देना होगा। आज की आवश्यकताओं के अनुरूप नई–नई वानिकी परियोजनाओं में लैंटाना तथा अन्य हानिकारक खर–पतवार उन्मूलन हेतु प्रभावी कार्यक्रम बनाने के लिए वन विभाग तत्पर है और इसके लिए वांछित संसाधन जुटाने हेतु प्रयासरत है।

मुझे पूरा विश्वास है कि प्रदेश को हरा–भरा व समृद्ध बनाने के लिए प्रत्येक प्रदेशवासी अपना सक्रिय सहयोग देगा।

(ठाकुर सिंह भरमौरी)

संदेश

प्रधान सचिव (वन)
हिमाचल प्रदेश

हिमाचल प्रदेश सरकार

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि हिमाचल प्रदेश वन विभाग द्वारा अपनी अर्द्धवार्षिक पत्रिका 'वनसंदेश' का प्रकाशन कुछ अंतराल के उपरांत पुनः आरम्भ किया जा रहा है।

वन मानव को प्रकृति द्वारा प्रदत्त एक अनुपम उपहार है। प्रदेश के वन न केवल हिमालय की नाज़ुक पारिस्थितिकी को संतुलित रखने में अहम् भूमिका निभाते हैं अपितु हमारी जनसंख्या का एक बड़ा भाग अपनी रोज़मर्रा की अनेक आवश्यकताओं के लिए भी इन पर निर्भर है। आज जब हम मौसम बदलाव तथा ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याओं से जूझ रहे हैं, ऐसे में तो वनों का महत्व और भी बढ़ जाता है।

वन विभाग द्वारा वन संरक्षण एवं विकास हेतु प्रादेशिक, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से अनेक वानिकी कार्यक्रम सफलतापूर्वक चलाए जा रहे हैं। वानिकी क्षेत्र में हो रहे बदलावों के दृष्टिगत आज की आवश्यकताओं के अनुरूप नई तकनीक अपनाने पर बल दिया जा रहा है। पौधरोपण हेतु गुणवत्ता युक्त पौध उपलब्ध करवाने हेतु पौधशालाओं का आधुनिकीकरण, जी.आई.एस. प्रणाली तथा फायर एलर्ट सिस्टम का विस्तार जैसे कार्य इसी दिशा में किए गए सराहनीय कदम हैं।

वनों की दृष्टि से हिमाचल प्रदेश में काफी प्रगति हुई है। वन सर्वेक्षण संस्थान देहरादून द्वारा वर्ष 2011 में प्रकाशित स्टेट ऑफ फारेस्ट रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश का हरित आवरण कुल भौगोलिक क्षेत्र का 26.37 प्रतिशत हुआ है जो वर्ष 1991 में 21.16 प्रतिशत था। मुझे पूरा विश्वास है कि वन विभाग अपने दायित्वों का निर्वाह करने में कानून, नियमों व अधिनियमों का पालन करते हुए, लोगों को साथ लेकर प्रदेश को हरा–भरा व समृद्ध बनाने में अहम् भूमिका निभाएगा।

वन संदेश के सफल प्रकाशन हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएं ।

(भारती एस सिहाग)

सम्पादकीय

हिमाचल प्रदेश वन विभाग की मुख्य पत्रिका "वन संदेश" का प्रकाशन वर्ष 1968 से हो रहा है जिसे पाठकों का अपार स्नेह प्राप्त होता रहा है। किन्हीं अपरिहार्य कारणों से वन संदेश के जुलाई–दिसम्बर, 2008 अंक के प्रकाशन के उपरान्त इस पत्रिका का प्रकाशन नहीं हो पाया था, लेकिन, हमें पूरा विश्वास है कि पाठकों को हुई इस असुविधा की भरपाई, अतिरिक्त पाठन सामग्री जुटाकर कर ली जाएगी।

मैं समझता हूँ कि इस दौरान वानिकी क्षेत्र में हो रहे क्रिया–कलापों की संक्षिप्त जानकारी आप से साझा करना उचित होगा। वन विभाग द्वारा प्रदेश में हिमाचल प्रदेश के हरित आवरण में वृद्धि हेतु राष्ट्रीय सहयोग की वानिकी योजनाओं को सफलतापूर्वक चलाया जा रहा है। नैशनल मैडिसिनल प्लांट बोर्ड के तहत 4.80 करोड़ रू० की लागत से कुल्लू, चम्बा, सिरमौर तथा कांगड़ा ज़िलों के 1257 हैक्टेयर क्षेत्र में 1.96 करोड़ औषधीय पौधे लगाने का कार्य प्रगति पर है। इसी प्रकार राष्ट्रीय बांस मिशन के तहत सिरमौर, मण्डी, बिलासपुर, कांगड़ा तथा हमीरपुर ज़िलों में, 1.49 करोड़ रू० की लागत से बांस प्रजाति के पौधरोपण को बढ़ावा दिया जा रहा है। ग्रीन ईंडिया मिशन के तहत जिला मण्डी, बिलासपुर, हमीरपुर तथा कांगड़ा में हरित आवरण वृद्धि हेतु 1.26 करोड़ रू० से कार्य किए जा रहे हैं।

प्रदेश के हरित आवरण में वृद्धि के प्रयासों को और अधिक गति प्रदान करने हेतु वानिकी विकास की दिशा में अन्तर्राष्ट्रीय अनुभवों का लाभ उठाते हुए, प्रदेश में विश्व बैंक सहयोग की 568.70 करोड़ रू0 की मध्य हिमालय जलागम विकास परियोजना 10 ज़िलों की 704 पंचायतों में सफलतापूर्वक चलाई जा रही है। इसी प्रकार ज़िला ऊना में जापान सहयोग की 220 करोड़ रू० की स्वां नदी परियोजना के अन्तर्गत 96 पंचायतें लाभान्वित हो रही हैं।

प्रदेश में 2 राष्ट्रीय उद्यानों तथा 33 वन्यप्राणी शरण्यों के माध्यम से वन्यप्राणी संरक्षण एवं विकास किया जा रहा है। लुप्त होने के कगार पर पहुंचे अति दुर्लभ, बर्फानी तेंदुए के संरक्षण हेतु स्पिति में 5.15 करोड़ रू० की स्नो लैपर्ड परियोजना आरम्भ की गई है। प्रदेश में कंजर्वेशन ब्रीडिंग कार्यक्रम के तहत राज्य पक्षी जुजुराणा के संरक्षण एवं विकास हेतु सराहन पक्षीशाला में 4.94 करोड़ रू की परियोजना सफलतापूर्वक

चलाई जा रही है इसी प्रकार चायल में चैहड़ पक्षी के संरक्षण हेतु 3.27 करोड़ रू० की परियोजना कार्यान्वित की जा रही है।

वन संदेश के माध्यम से हमारा यह हर सम्भव प्रयास रहता है कि प्रदेश के जंगल, जल, ज़मीन, वन्यप्राणी तथा पर्यावरण से सम्बन्धित क्रिया कलापों का संदेश आम पाठक तक आम भाषा में पहुंचाया जाए। वन संदेश के इस अंक में उपरोक्त विषयों की लाभप्रद जानकारी उपलब्ध करवाने का प्रयास किया गया है। हमें पूरा विश्वास है कि हमारे पाठकों को यह अवश्य पसन्द आएगी। हम उन सभी के आभारी हैं, जिन्होंने इस अंक को प्रासंगित और जनोपयोगी बनाने में हमें सहयोग प्रदान किया।

हमारा पाठकों से भी विनम्र निवेदन है कि वे वन, वन्यप्राणी तथा पर्यावरण आदि विषयक जानकारी, विचार, लेख, कविता, सफलता की कहानी या कोई अन्य पाठन योग्य सामग्री, वन संदेश में प्रकाशन हेतु हमें भेज सकते हैं। आशा है कि वन संदेश को और अधिक रोचक बनाने में आपका सहयोग हमें पहले की तरह ही प्राप्त होता रहेगा।

शुभकामनाओं सहित

सतीश गुप्ता
संपादक, वन संदेश

विषय सूची

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ सं.
1.	हिमाचल प्रदेश में वन विकास के बढ़ते कदम	आर.के. गुप्ता	9
2.	हिमाचल प्रदेश में वनअग्नि नियंत्रण हेतु रणनीति	अवतार सिंह	12
3.	जंगल की आग	किशोरी लाल शर्मा	15
4.	ईको टॉस्क फोर्स प्रदेश का पर्यावरण योद्धा	कर्नल नरसिम्हन	16
5.	कालाटोप-खज़ियार : पक्षियों के लिए आदर्श...	सुरजीत पठानिया	18
6.	वन संरक्षण अधिनियम-1980 की उपयोगिता	कल्याण सिंह शक्तान	19
7.	मानव-वन्यजीव अन्तर्द्वन्द्व	डॉ. संदीप रतन	22
8.	पवित्र पीपल	डॉ. दीपराज शास्त्री	29
9.	हि.प्र. के सुन्दर अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के वैटलैंड...	-	30
10.	चीड़ से बिरोजे के निष्कासन की नई छिद्र....	कुलवंत राय शर्मा एवं चंद्र लेखा	31
11.	जटामांसी-एक अत्ति महत्त्वपूर्ण औषधीय पौधा	कामिनी एवं डॉ. आर. रैना	33
12.	वनस्पति वृक्ष वाटिका का महत्व	डॉ. विनीत जिस्टू	34
13.	चिरायता उपयोगिता तथा कृषिकरण	बन्दना, पैनसी, आर. रैना व यशपाल शर्मा	36
14.	नन्ही गौरैया : एक दृष्यावलोकन	सतपाल धीमान	38
15.	ग्रेट हिमालयन राष्ट्रीय उद्यान : सामुदायिक विकास...	संदीप शर्मा	40
16.	ग्रीन इण्डिया मिशन	ई. विक्रम	42
17.	हिमाचल प्रदेश की समृद्ध वन सम्पदा	-	44
18.	19वें राष्ट्रीय खेल व हिमाचल प्रदेश का प्रदर्शन	नागेश गुलेरिया	45

वन संदेश में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचारों से सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

सम्पादक मण्डल

1. श्री आर.के.गुप्ता, भारतीय वन सेवा, प्रधान मुख्य अरण्यपाल, हिमाचल प्रदेश — प्रधान संपादक
2. डॉ. सविता, भारतीय वन सेवा, अतिरिक्त प्रधान मुख्य अरण्यपाल (मानव संसाधन विकास) — वरिष्ठ संपादक
3. श्री सतीश गुप्ता, हि.प्र. वन सेवा, वन मण्डल अधिकारी, प्रचार वन मण्डल, शिमला — संपादक
4. डॉ. ओमपाल शर्मा, हि.प्र. वन सेवा, सहायक अरण्यपाल, प्रचार वन मण्डल, शिमला — सह संपादक
5. सुश्री अनिता भारद्वाज, वन परिक्षेत्र अधिकारी, प्रकाशन, प्रचार वन मण्डल, शिमला — उप संपादक

हिमाचल प्रदेश में वन विकास के बढ़ते कदम

– आर.के. गुप्ता, भा.व.से.
हैड आफ फारैस्ट फोर्स एवं प्रधान मुख्य अरण्यपाल, हि.प्र.

हिमाचल प्रदेश के वनों का पश्चिमी हिमालय क्षेत्र के संवेदनशील पर्यावरण को संतुलित रखने में विशेष महत्व है। प्रदेश के कुल भौगोलिक क्षेत्र 55,673 वर्ग कि.मी. का 37033 वर्ग कि.मी. भू–भाग (66.52 प्रतिशत) कानूनन वन क्षेत्र है। रावी, चिनाव, सतलुज, ब्यास, चिनाब तथा यमुना का जलग्रहण क्षेत्र होने के कारण हमारे प्रदेश का निचले व देश के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र की आर्थिकी में विशेष योगदान है। पिछले दो दशकों (वर्ष 1991–2011) में प्रदेश का हरित आवरण 21.16 प्रतिशत से बढ़ कर 26.37 प्रतिशत हुआ है।

वर्ष 2011 की जन गणना के अनुसार हिमाचल प्रदेश की जनसंख्या 68.56 लाख आंकी गई है, जबकि 2001 में यह 60.77 लाख थी। जनसंख्या घनत्व 123 प्रति वर्ग कि.मी. आंका गया है, जबकि 2001 में यह 109 था। प्रदेश के 12 लाख से अधिक परिवारों में से लगभग 10 लाख से अधिक परिवार, गांव में बसते हैं। इनमें से अधिकतर छोटे किसान हैं तथा इनके पास केवल 1 से 4 हैक्टेयर तक भूमि है। यह आज भी अपनी ईंधन, घास, चारा, पत्ती तथा अन्य गौण–वनोपजों आदि की आवश्यकताओं के लिए वनों पर निर्भर हैं।

वर्ष 2007 के अस्थाई आंकड़ों के अनुसार प्रदेश में पालतू पशुओं की संख्या 54.45 लाख है। इसमें 9 लाख भेड़ें, 12.44 लाख बकरियां तथा 7.61 लाख भैंसें हैं। इसके अतिरिक्त प्रदेश में दिसम्बर, 2003 में करवाई गई वानर गणना में 3.39 लाख बन्दर व 46526 लंगूर, अप्रैल, 2004 में 3.19 लाख बन्दर व 56986 लंगूर और दिसम्बर, 2004 में 3.17 लाख बन्दर व 53331 लंगूर होने का अनुमान लगाया गया है। भारतवर्ष में पाई जाने वाली लगभग 45000 वनस्पति प्रजातियों में से 3295 प्रजातियां (7.32 प्रतिशत), हिमाचल में पाई जाती हैं। जिनमें से लगभग 100 प्रजातियां, वनऔषधियों के रूप में चिन्हित की गई हैं। हमारे प्रदेश में विद्यमान वन सम्पदा का वर्ष 2001 का कुल मूल्यांकन 1 लाख 6 हजार 664 करोड़ रू० था। इसका पुनर्मूल्यांकन भोपाल स्थित आई.आई.एफ.एम. द्वारा किया जा रहा है।

वन विभाग प्रदेश के मुख्य तथा पुराने विभागों में से एक है जिसे वनों के वैज्ञानिक प्रबन्धन का महत्वपूर्ण कार्य सौंपा गया है। प्रदेश के वनों का वैज्ञानिक प्रबन्धन लगभग 10 हज़ार अधिकारियों व कर्मचारियों के सशक्त प्रशासनिक ढांचे के माध्यम से किया जा रहा है। प्रदेश वन विभाग के दो प्रभाग हैं। क्षेत्रीय प्रभाग तथा वन्यप्राणी प्रभाग। क्षेत्रीय प्रभाग, जिसे टैरीटोरियल प्रभाग भी कहा जाता है, के अंर्तगत 9 वन वृत्त, 36 वन मंडल, 161 वन परिक्षेत्र, 498 वन खंड एवं 1841 वन बीटें हैं। वन्यप्राणी प्रभाग के तहत 3 वन वृत्त, 6 वन मंडल, 32 वन परिक्षेत्र 66 वन खंड तथा 194 वन बीटें आती हैं। वर्ष 2012–13 के लिए प्रदेश में वानिकी क्षेत्र हेतु 127.16 करोड़ रूपए का प्रावधान किया गया है।

प्रदेश में वाह्य सहायता प्राप्त वानिकी परियोजनाऐं सफलतापूर्वक चलाई जा रही हैं। जिसमें विश्व बैंक सहयोग की "मध्य हिमालय जलागम विकास परियोजना" के अन्तर्गत प्रदेश के 10 जिलों में फैली 602 पंचायतों में 365 करोड़ रूपए का प्रावधान है। जापान अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग संस्था (जाईका) द्वारा वित्तपोषित "स्वां नदी समन्वित जलागम विकास परियोजना" के अन्तर्गत ऊना जिले की 96 पंचायतों में 160 करोड़ रूपए का प्रावधान है। यह हर्ष का विषय है कि इन परियोजनाओं के क्रियान्वयन प्रयासों को वित्तपोषण करने वाली संस्थाओं द्वारा सराहा गया है। परिणामस्वरूप स्वां परियोजना में वित्तीय प्रावधान 160 से बढ़ा कर 220 करोड़ रूपए कर दिया गया है एवं विश्व बैंक ने सैद्धान्तिक तौर पर 102 नई पंचायतों में 175 करोड़ रूपए की अतिरिक्त धनराशी की स्वीकृति प्रदान की है।

प्रदेश वन विभाग द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 20 हजार हैक्टेयर क्षेत्र में पौधरोपण किया जा रहा है। इसमें चौड़ी

पत्ती एवं औषधीय पौधों को प्राथमिकता दी जा रही है। नर्सरियों का आधुनिकीकरण किया जा रहा है तथा नर्सरियों में जैविक खाद का भरपूर उपयोग किया जा रहा है ताकि पौधरोपण हेतु स्वस्थ पौधे उचित मात्रा में उपलब्ध करवाए जा सकें। प्रदेश में जल एवं भूमि के संरक्षण तथा नमी बढाने व भू–जल के पुर्नस्थापन हेतु जल संरचनाओं का निर्माण किया जा रहा है। गत वर्ष इस प्रकार की 148 जल संरचनाएं निर्मित हुई तथा इस वर्ष 100 नई जल संरचनाए निर्मित की जा रही हैं। इससे वनअग्नि शमन में सहायता के साथ–साथ वन्यजीवों को पीने का पानी भी उपलब्ध हो सकेगा।

प्रदेश के सतत् विकास हेतु एफ.सी.ए., 1980 के प्रावधानों के अनुरूप, 10 मैगावाट क्षमता से अधिक की पन–विद्युत परियोजनाओं के जल–ग्रहण क्षेत्रों के समन्वित उपचार हेतु कैट प्लान Catchment Area Treatment Plans (CAT PLANs) का प्रावधान है। इसके लिए उपभोक्ता एजैन्सियों द्वारा हिमाचल राज्य कैम्पा 'Compensatory Afforestation Management and Planning Authority' (CAMPA) के पास वित्तिय संसाधन उपलब्ध करवाए जाते हैं। अब स्थान विशेष पर आधारित खंडित कैट योजनाओं के स्थान पर रिवर बेसिन पर आधारित योजनाएं होंगी। सतलुज जल ग्रहण क्षेत्र के लिए समन्वित योजना अनुमोदित की जा चुकी है जबकि दूसरी नदियों के जल ग्रहण क्षेत्रों के लिए विनियोजन प्रगति पर हैं।

प्रदेश वन विभाग का यह हर सम्भव प्रयास रहा है कि विकासात्मक कार्यों में भी कोई रूकावट न आए और वन भी बचे रहें। वन संरक्षण अधिनियम, 1980 के अन्तर्गत विभिन्न विकास योजनाओं के तहत गैर–वानिकी कार्यों हेतु दिसम्बर 2012 तक 1533 मामलों की स्वीकृति दी गई है जिसमें 11076 हैक्टेयर वन भूमि हस्तान्तरित की गई है।

प्रदेश के वन क्षेत्रों का वैज्ञानिक प्रबन्धन 36 कार्य योजनाओं के तहत किया जा रहा है। कुल 36 में से 28 कार्य योजनाओं की स्वीकृति भारत सरकार से प्राप्त हो चुकी है तथा शेष 8 कार्य योजनाओं पर कार्य जारी है।

वनों की आग से सुरक्षा हेतु विभाग द्वारा नियमित सुरक्षा उपाय किए जाते हैं। इसी दिशा में हमीरपुर व बिलासपुर वन वृत द्वारा चीड़ की पत्तियों को स्थानीय लोगों द्वारा इकटठा करवा कर, डेढ़ रू० प्रति किलोग्राम की दर से शिवांबू इन्टरनैशनल ऊना, जस्सर पेपर संसारपुर टैरस तथा अम्बूजा सीमेंट दाड़लाघाट जैसी कम्पनियों को बेचा गया। गत वर्ष तक कुल 8724 क्विंटल चीड़ पत्तियों का विक्रय हुआ जिससे स्थानीय लोगों को लगभग 13 लाख रू० से अधिक की आमदनी हुई। जन–सहयोग की यह पहल वास्तव में अनुकरणीय है। इससे स्थानीय लोगों को अतिरिक्त आय के साथ–साथ चीड़ के वनों को आग से बचाने में भी सहायता मिलेगी। वन विभाग द्वारा वनों को आग से होने वाले नुकसान को कम करने के लिए वन अग्नि चेतावनी प्रणाली भी विकसित की जा रही है।

वन भूमि पर अतिक्रमण को हटाने व इसकी रोकथाम हेतु समयबद्ध व व्यापक कार्यवाही अमल में लाई जा रही है। 10 बीघा से अधिक के मामलों को पुलिस के सहयोग से हटाया जा रहा है। आवश्यकतानुसार न्यायालयों में मामलों को ले जा कर इनकी पैरवी की जा रही है। वनों में लगाई गई बुर्जियों की मुरम्मत का काम प्राथमिकता के आधार पर किया जा रहा है।

हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा प्रदेश के संवेदनशील पर्यावरण के संरक्षण तथा राष्ट्रहित को ध्यान में रखते हुए 80 के दशक में कुछ कड़े निर्णय लिए गए थे जिसके सार्थक परिणाम आज हमारे समक्ष हैं। वन विभाग लकड़ी की अवैध तस्करी के मामलों में संलिप्त अपराधियों से सख्ती से निपट रहा है। भारतीय वन अधिनियम की धारा 52–A के तहत अब तक तस्करी में प्रयुक्त 183 वाहन पकड़े गए जिनमें से 122 वाहनों को जब्त किया गया है।

हिमाचल प्रदेश की अधिकतर आबादी गांव में बसती है जो अपनी ईंधन, काष्ठ, चारे तथा गौणवनोपजों की दैनिक आवश्यकताओं के लिए आज भी वनों पर निर्भर है। हमारे ग्रामीणों को वनों में बर्तनदारी हक प्राप्त हैं। लोगों को यह अधिकार दीर्घकाल तक सत्त रूप में प्राप्त होते रहें, इसके लिए आवश्यक है कि इनका दुरूपयोग रोका जाए और इनका बेहद किफायत से उपयोग किया जाए। इसी के मद्देनज़र माननीय न्यायालय के हस्तक्षेप से युक्तिकरण के उपरांत लोगों को टी.डी. अधिकार पुनः बहाल हो पाए हैं।

वन और वन्यप्राणी एक दूसरे के पूरक हैं। हिमाचल प्रदेश में अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप वन्यप्राणी प्रबन्धन किया जा रहा है। हिमाचल प्रदेश में 2 राष्ट्रीय उद्यानों तथा 33 वन्यप्राणी शरण्यों के माध्यम से कुल भौगोलिक क्षेत्र के 13.65 प्रतिशत भू–भाग को संरक्षित क्षेत्र (प्रोटैक्टिड एरिया नैटवर्क) के अन्तर्गत लाया गया है। प्रदेश सरकार के प्रयासों से वन्यप्राणी शरण्यों तथा उनके आसपास के लोगों की समस्याओं के समाधान हेतु युक्तिकरण की प्रक्रिया पूरी होने को है। इसमें 775 गांवों को शरण्यों से बाहर रखने से जहां 1 लाख 14 हजार की आबादी को लाभ होगा, वहीं प्रोटैक्टिड एरिया नैटवर्क क्षेत्र भी बढ़ कर कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 15 प्रतिशत हो जाएगा जबकि राष्ट्रीय औसत मात्र 4.7 प्रतिशत है।

विभाग द्वारा लुप्त होने के कगार पर पहुंचे पशु–पक्षियों हेतु कन्जर्वेशन ब्रीडिंग कार्यक्रम चलाया गया है। इसके अन्तर्गत चायल –खड़यून में चीर फीज़ैंट पक्षी के संरक्षण हेतु 3.27 करोड़ रू० लागत का कन्जर्वेशन ब्रीडिंग कार्यक्रम, सराहन–पक्षीशाला में राज्य–पक्षी जुजूराणा के प्रजनन हेतु 4.94 करोड़ रू० (3.65 करोड़ रू० केन्द्र तथा 1.29 करोड़ रू० राज्य) से चलाया गया तथा मनाली में 2.06 करोड़ रू० लागत के हिमालयन मोनाल कन्जर्वेशन ब्रीडिंग कार्यक्रम को सैन्ट्रल जू अथारिटी द्वारा हरी झंडी मिल चुकी है। हिमाचल प्रदेश में उपलब्ध दुर्लभ वन्यजीव एवं प्रदेश के राज्य पशु, बर्फानी तेंदुए के संरक्षण एवं विकास हेतु 515.184 लाख रू० की योजना, स्नो लैपर्ड प्रोजैक्ट (2010–14), को केन्द्र की मंजूरी प्राप्त हुई है।

वन विभाग द्वारा जन–जातीय क्षेत्रों के लिए विशेष कार्यक्रम चलाया जा रहा है। प्रदेश के कुल योजना बजट 127 करोड़ का लगभग 9 प्रतिशत बजट जन जातीय क्षेत्रों में व्यय किया जा रहा है। प्रदेश के चरागाह विकास हेतु विशेष योजना कार्यान्वित की जा रही है। प्रदेश के भेड़–बकरी पालकों की दिक्कतों को ध्यान में रखते हुए भेड़–बकरी हेतु विशेष कौरिडोर की व्यवस्था की गई है। वनों में चारे की उपलब्धता बढ़ाने के प्रयासों के तहत लैंटाना जैसे खतरनाक खरपतवारों के उन्मूलन तथा उसके स्थान पर चारा–पत्ती वर्धक स्थानीय प्रजातियों के विस्तार हेतु व्यापक कार्यक्रम चलाया जा रहा है। वन विभाग द्वारा घुमंतु चरवाहों की दिक्कतों को देखते हुए गुज्जर–गद्दी को जारी किए जाने वाले परमिट की अवधि एक से बढ़ा कर तीन साल की गई है।

हिमाचल प्रदेश में प्रकृति पर्यटन की अपार सम्भावनाएं हैं। प्रकृति पर्यटन को बढावा देने हेतु विभाग द्वारा वन विश्राम गृहों के रख–रखाव व सुधार पर विशेष बल

दिया जा रहा है जिसके लिए इस वर्ष 5 करोड़ रू० का प्रावधान रखा गया है।

वन विभाग हिमाचल प्रदेश, वानिकी क्षेत्र में उत्कृष्ठ संस्थान बनने के लिए प्रतिबद्ध है। वन संरक्षण के कार्य में वन विभाग द्वारा हर संभव प्रयास जारी रखते हुए सार्थक सुझावों को अमल में लाया जाएगा। विभाग अपने उत्तरदायित्व का भलीभांति निर्वहन करते हुए प्रगतिशील एवं समावेशी विकास को प्राप्त करने में सफल होगा, ऐसा हमारा विश्वास है।

हमारा प्रयास
हरा-भरा हिमाचल प्रदेश

हिमाचल प्रदेश में वनअग्नि नियंत्रण हेतु रणनीति

अवतार सिंह, भा.व.से.

हिमाचल प्रदेश का कुल भौगोलिक क्षेत्र 55673 वर्ग कि.मी. है जिसमें से 37033 वर्ग कि.मी. क्षेत्र वनों के अंतर्गत आता है। प्रदेश का 4900 वर्ग कि.मी. क्षेत्र जो प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 11.43 प्रतिशत तथा वन क्षेत्र का 13.23 प्रतिशत है, वन अग्नि संवेदी माना जाता है। इसमें धर्मशाला, मंडी, बिलासपुर, नाहन, हमीरपुर और चंबा वन वृत्त सम्मिलित है। इन वन मण्डलों तथा प्रदेश के अन्य क्षेत्रों के विशेषकर चीड़ और झाड़ीदार वनों में प्रतिवर्ष आग लगने की अधिक सम्भावना होती है।

वनों के वैज्ञानिक प्रबन्धन हेतु तैयार की जाने वाली वर्किंग प्लान अर्थात कार्ययोजना में निर्धारित मानकों के अनुरूप वन अग्नि नियंत्रण हेतु कार्य निर्धारित किए जाते हैं जैसे, जंगलों में फायर लाईनों की सफाई, वनों में उपलब्ध अन्य जलावन को नियंत्रित रूप में जला कर साफ करना आदि–आदि। वन अग्नि की कारगर रोकथाम हेतु वन विभाग द्वारा जन सहयोग आधारित एक नई पहल की गई है। जिसके अनुसार, स्थानीय लोगों को वनों में उपलब्ध अत्याधिक ज्वलनशील चीड़ की पत्तियों को एकत्रित करने में सम्मिलित कर इस जलावन को सीमेंट फैक्ट्रियों आदि को ईंधन के रूप में प्रयोग हेतु विक्रय किया जा रहा है। इस प्रकार वनों में ज्वलनशील चिलारूओं के बोझ को कम कर आग के जोखिम व तीव्रता को कम करने में सहायता मिलेगी।

प्रदेश में वनअग्नि संवेदी क्षेत्र की स्थिति

वन वृत्त	वन क्षेत्र हैक्टेयर	वनअग्नि संवेदी क्षेत्र			कुल वन क्षेत्र का प्रतिशत
		चीड़	पौधरोपण/अन्य	कुल	
बिलासपुर	69895.00	18230.16	10649.57	28879.73	26.80
चम्बा	488548.00	22132.32	1986.50	24118.82	4.94
धर्मशाला	253233.00	24049.71	35502.65	59552.36	23.52
हमीरपुर	101524.00	25190.11	19899.72	45089.83	44.41
कुल्लू	873080.00	6468.32	13434.86	19903.18	2.28
मण्डी	174209.00	13826.41	65979.11	79805.52	44.04
नाहन	188790.00	13826.41	65979.11	79805.52	42.27
रामपुर	570460.00	15833.77	9947.17	25780.94	4.52
शिमला	281721.00	2305.00	8204.00	10509.00	3.73
वन्यप्राणी	701837.00	9744.84	120033.35	129778.19	9.87
कुल	3703300.00	170874.01	319120.10	489994.11	11.43

सभी जानते हैं कि वनों में आग की घटनाएं अधिकतर मानवीय कारणों से होती हैं । लोगों की निजी घासनियों से आग, आसपास के वनों में न जाए, इसके लिए नियम बनाए गए हैं। इन नियमों के अनुसार यदि कोई वनों के आस–पास सौ मीटर की दूरी पर अपनी निजी घासनी में आग लगाता है तो उसे, इसकी पूर्व सूचना निकटतम वन कार्यालय को देनी अनिवार्य है। ऐसा न करने पर उसके खिलाफ कार्यवाही अमल में लाई जा सकती है। लेकिन वन विभाग का यह मानना है कि यदि प्रदेश के वनों को सुरक्षित रखना है तो स्थानीय लोगों को साथ लेकर चलना होगा, केवल कानून बनाने से काम नहीं चलेगा। इसी के दृष्टिगत विभाग द्वारा जहां एक ओर कानून की अनुपालना करवाने में कोई कोर–कसर बाकी नहीं रहने दी जाती वहीं दूसरी ओर स्थानीय समुदायों में जन–चेतना जागृत करने हेतु व्यापक प्रचार अभियान चलाया गया है। सूचना तंत्र को प्रभावी बनाया गया है। वन वृत्त, मण्डल तथा परिक्षेत्र स्तर पर सूचना केन्द्र स्थापित किए गए हैं। वन मण्डल तथा वन परिक्षेत्र स्तर पर रैपिड एक्शन टीम स्थापित की गई हैं, जो आग की सूचना मिलते ही त्वरित कार्यवाही के लिए उपलब्ध होंगी।

वन विभाग के प्रचार वन मण्डल द्वारा वनों की आग से सम्बन्धित पोस्टर तथा अन्य प्रचार सामग्री तैयार

कर पूरे प्रदेश के वनअग्नि संवेदी वन वृत्तों में वितरित की गई है। वन विभाग के टेलीफोन तथा मोबाईल नम्बरों को व्यापक रूप से प्रचारित किया गया है ताकि आम लोग वनों की आग की जानकारी तथा सहायता सम्बन्धी सूचनाओं का आदान प्रदान आसानी से कर सकें। लोगों को जागरूक करने के लिए समय–समय पर आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से भी संदेश दिए जाते रहे हैं।

हिमाचल प्रदेश में 1381 सक्रिय संयुक्त वन प्रबंध समितियां हैं। इन संयुक्त वन प्रबंध समितियों को जंगलों की आग की

रोकथाम के कार्य में सम्मिलित किया जा रहा है। इन समितियों को प्रोत्साहन स्वरूप अनुदान के रूप में वित्तिय सहायता भी दी जा रही है। चयनित संयुक्त वन प्रबन्ध समितियों को अपने–अपने अधिकार क्षेत्र के आस–पास वन अग्नि रोधी कार्यों जैसे, फायर लाईनों की सफाई, आग के मौसम के दौरान मजदूरों की तैनाती आदि का कार्य सौंपा गया है। इस कार्य हेतु इस वर्ष चम्बा, धर्मशाला, मंडी, हमीरपुर, बिलासपुर और नाहन वन वृत्तों की 446 संयुक्त वन प्रबंध समितियों को चयनित किया गया है।

वर्ष 2012–13 के दौरान विभिन्न गतिविधियों को शुरू करने के लिए 316.05 लाख रू0 का वित्तीय प्रावधान किया गया है। आमतौर पर फायर सीजन 15 अप्रैल से 30 जून तक होता है लेकिन गर्मी की अवधि बढ़ने पर फायर सीजन को बढाया जा सकता है। अपने पिछले अनुभवों से सीखते हुए विभाग ने मौजूदा अग्निशमन क्षमताओं को बढ़ाने का निर्णय लिया और वन अग्नि संवेदी क्षेत्रों को अग्निशमन के आधुनिक उपकरणों से लैस किया जा रहा है।

विभाग द्वारा मार्च–अप्रैल के दौरान सभी आग संवेदी वन वृत्तों में वनों की आग की रोकथाम विषयक रणनीति अपनाने बारे कार्यशालाओं का आयोजन किया गया। वन अरण्यपालों को भी अपने अधिकार क्षेत्र में वनों की आग से निपटने की तैयारियों की समय–समय पर समीक्षा करने के निर्देश दिए गए। सभी वन अधिकारियों व

कर्मचारियों को फायर सीजन के दौरान छुट्टी पर न जाने तथा अपनी तैनाती के स्थान पर मुस्तैद रहने के आदेश दिए गए हैं। सूचना तंत्र को प्रभावी बनाया गया है।

वनों की आग के मौसम के दौरान सूचना के आदान–प्रदान तथा त्वरित कार्यवाही हेतु वन रक्षक स्तर

तक मोबाईल फोन के खर्च की प्रतिपूर्ति की अनुमति प्रदान की गई है। वनों में की जाने वाली गतिविधियों का कैलेंडर तैयार कर उसे अपनाने हेतु पूरे प्रदेश में वितरित किया गया है।

वन वृत्त, मण्डल तथा परिक्षेत्र स्तर पर सूचना केन्द्र स्थापित किए गए हैं। वन मण्डल तथा वन परिक्षेत्र स्तर पर रैपिड एक्शन टीम स्थापित की गई हैं, जो आग की सूचना मिलते ही त्वरित कार्यवाही के लिए उपलब्ध होंगी। वनों की आग की दैनिक रिपोर्टिंग की प्रणाली को अपनाया गया है और आग की सभी घटनाओं की प्राथमिकी को पुलिस के पास दर्ज करवाना अनिवार्य कर दिया गया है। वन अरण्यपालों तथा अन्य सम्बन्धित वन अधिकारियों को आग की घटनाओं की व्यक्तिगत रूप से जांच करने तथा पुलिस में प्राथमिकी दर्ज करवाने के निर्देश दिए गए हैं ताकि अपराधियों से कड़ाई से निपटा जा सके। ऐसा प्रावधान भी किया गया है कि 3 से 10 हैक्टेयर क्षेत्र में वन अग्नि के प्रभावित पौधरोपण क्षेत्र विषयक जांच की जिम्मेवारी वन परिक्षेत्र अधिकारी/सहायक अरण्यपाल, 10–20 हैक्टेयर के लिए वन मण्डल अधिकारी तथा इससे ऊपर अरण्यपाल द्वारा स्वयं जांच की जाएगी।

प्रधान मुख्य अरण्यपाल हिमाचल प्रदेश द्वारा अतिरिक्त प्रधान मुख्य अरण्यपाल की अगवाई में मुख्य अरण्यपालों को एक–एक वन वृत्त की निगरानी करने के आदेश जारी किए गए तथा प्रधान मुख्य अरण्यपाल ने व्यक्तिगत तौर पर विभिन्न वन वृत्तों में वनों की आग की स्थिति की निगरानी एवं समीक्षा का जिम्मा उठाते हुए मई, 2012 में बिलासपुर एवं हमीरपुर वन वृत्तों में वनों की आग की समीक्षा की और फील्ड कर्मचारियों को वनअग्नि नियंत्रक उपायों सम्बन्धी दिशा निर्देश दिए।

वन अग्नि संवेदी क्षेत्रों से सटी निजी घासनियों का डेटाबेस तैयार किया गया है जिसमें भूमि मालिक का नाम, स्थान, पता, संपर्क नम्बर तथा आस–पास के वनों के विषय में विस्तृत जानकरी होती है। यह डेटा बेस वन मण्डल स्तर तक तैयार किया गया है। इन घासनियों के मालिकों को आग के मौसम के दौरान बिना वन विभाग को सूचित किए अपनी घासनियों में आग न लगाने को कहा गया है। उन्हें यह भी कहा गया है कि वे केवल दिन के समय तथा वन विभाग के प्रतिनिधि की उपस्थिति में अपनी घासनियों में आग लगा सकते है।

हिमाचल प्रदेश में मध्यप्रदेश की तर्ज पर वन अग्नि रोधक प्रणाली अपनाई जा रही है। मध्यप्रदेश में एम.ओ.डी.आई.एस उपग्रह के माध्यम से विकसित आग चेतावनी संदेश प्रणाली को अपनाया गया है। इस प्रणाली के माध्यम से वनों की आग पर लगातार नज़र रखी जा सकती

है, लगातार आंकड़े प्राप्त होने से डेटाबेस को अपडेट तथा प्रतिक्रिया समय को काफी कम किया जा सकता है।

प्रदेश वन विभाग द्वारा उठाए जा रहे यह कदम वनों की आग की रोकथाम की दिशा में एक मील का पत्थर साबित होंगे।

जंगल की आग

किशोरी लाल शर्मा
कनिष्ठ अभियन्ता, निदेशालय उद्योग, बैमलोई, शिमला

ग्रीष्म ऋतु तपती है बहु भारी।
सभी कराहते मचती हाहाकारी।।
बच्चे बूढ़े सब नर–नार ।
तौबा करते करें पुकार।।
पशु–पक्षी जीव जन्तु प्रजनन करते।
जंगलों घौंसलों निज घरों में रहते।।
शीतल वायु ठण्डे जल हित तरसते।
मैदानों से आगे पहाड़ों में जा बसते।।
ठण्डी वायु शीतल जल के झरने।
प्रकृति नहीं देती किसी को मरने।।
शान्ति से रहते है सब प्राणी।
नहीं करते इक दूजे की हानि।।
मानव तिनके घास निज लाभ स्वार्थ।
जंगलों में आग लगाता न करे परमार्थ।।
जंगलों में आग फैले भयंकर।
गर्म हो जाते हैं पत्थर कंकर।।
प्रचण्ड अग्नि वायु दूषित तापमान बढ़ाती।
मानव की समझ में फिर भी बात न आती।।
क्यों जंगलों में वह आग लगाता।
प्रकृति विरूद्ध क्यों कर्म कमाता।।
पशु पक्षी जीव जन्तु तड़प जल जाते।
अण्डे जलें गर्भ गिरें बच्चे चिल्लाते।।
क्यों मानव ईश से भय नहीं है खाता।
उसकी सन्तति से कोई ऐसा कर पाता।।
हाथ छाती पे पीटे, मुख से चीख पुकार।
ज़रा तो शर्म करें ईश दण्ड से डरे संसार।।

अनुकरणीय

हमीरपुर वन वृत्त

हमीरपुर वन वृत्त द्वारा चीड़ की पत्तियों को स्थानीय लोगों द्वारा एकत्र करवा कर डेढ़ रूपए प्रति किलोग्राम की दर से शिवांबू इंटरनैशनल ऊना, जस्सर पेपर संसारपुर टैरस तथा अम्बूजा सिमेंट दाड़लाघाट जैसी कम्पनियों को बेचा गया। जुलाई, 2011 तक कुल 8724 क्विंटल चीड़ की पत्तियों का विक्रय हुआ जिससे स्थानीय लोगों को 13 लाख रू0 से अधिक की आमदनी प्राप्त हुई।

बिलासपुर वन वृत्त

इसी प्रकार, वनअग्नि संवेदी, कुनिहार वन मण्डल में वन मण्डलाधिकारी, श्री प्रेम महाजन की अगुवाई में वन मण्डल के कुल 17882.90 हैक्टेयर वन क्षेत्र में से 3000 हैक्टेयर क्षेत्र की पहचान कर स्थानीय समुदाय, विशेषकर महिला मण्डलों तथा युवक मण्डलों आदि को चीड़ की पत्तियां एकत्र कर अम्बूजा सीमेंट को देने के लिए प्रेरित किया गया। इससे जहां एक ओर वनों को आग से बचाने में सहायता मिली वहीं स्थानीय लोगों व स्थानीय ट्रांसपोर्टरों को आय का एक अतिरिक्त साधन भी उपलब्ध हो पाया ।

जन–सहयोग की इस सफल पहल का अनुकरण अन्य वनअग्नि संवेदी क्षेत्रों में भी किया जाना चाहिए।

ईको टॉस्क फोर्स प्रदेश का पर्यावरण योद्धा

कर्नल नरसिम्हन,
133 पैदल वाहिनी (प्रादेशिक सेना) डोगरा, पर्यावरण युनिट

हिमाचल प्रदेश के वानिकी विकास के इतिहास में 15 मार्च 2006 का दिन स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जाएगा क्योंकि प्रदेश को वनाच्छादित करने के प्रयासों में प्रदेश के सेवानिवृत्त सैनिकों को सम्मिलत करने हेतु इस दिन, भारतीय सेना तथा हिमाचल प्रदेश सरकार के मध्य एक ऐतिहासिक समझौता हुआ था। भारत सरकार की स्वीकृति के उपरान्त लागू हुए इस समझौते के अनुसार, पर्यावरण संरक्षण एवं विकास में भारतीय सेना के सेवानिवृत्त रणबांकुरों की सेवाएं लेने के लिए, शिमला के समीप कुफरी में 133 पैदल वाहिनी (प्रादेशिक सेना) डोगरा, पर्यावरण युनिट मुख्यालय स्थापित किया गया, जिसकी एक कम्पनी ज़िला मण्डी के तत्तापानी (थली) में स्थापित की गई है। प्रदेश के सेवानिवृत्त सैनिकों के पुनर्वास तथा पर्यावरण विकास में इनकी सेवाएं लेने के उद्देश्य से स्थापित इस युनिट का पूरा खर्च हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा वहन किया जाता है। 133 पैदल वाहिनी (प्रादेशिक सेना) डोगरा, पर्यावरण युनिट, देश भर में इसी प्रकार स्थापित अन्य राज्यों की कुल आठ पर्यावरण बटालियनों में से एक है।

सभी जानते हैं कि भारतीय सेना में रहते हुए प्रदेश के सैनिक, अनुशासन तथा कर्तव्य निष्ठा के बल पर देश के लिए अपनी जान न्योछावर करने में सदैव आगे रहे हैं। इनकी विजय गाथा सेना के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में दर्ज है। सेना में अपना सेवाकाल पूरा करने के उपरान्त, अब यह जांबाज प्रदेश की नाजुक पारिस्थितिकी व पर्यावरण के संरक्षण एवं विकास में अपना पसीना बहा रहे हैं।

हिमाचल प्रदेश वन विभाग द्वारा 133 पैदल वाहिनी (प्रादेशिक सेना) डोगरा, पर्यावरण युनिट, ईको टास्क फोर्स के जवानों के लिए कुफरी में पौधरोपण का व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाया गया ताकि युद्ध में पारंगत इन सैनिकों को नए कार्य के लिए तैयार किया जाए। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान, प्रशिक्षण में दक्ष वन अधिकारियों द्वारा ईको टास्क फोर्स के जवानों को वानिकी तथा पौधरोपण की बारीकियां तथा तकनीकी जानकारी उपलब्ध करवाई गई। प्रशिक्षण पूरा होने के उपरान्त कम्पनी को हिमाचल प्रदेश वन विभाग से पहला प्रोजैक्ट प्राप्त हुआ। प्रोजैक्ट के अनुसार सतलुज नदी–बेसिन के तत्तापानी में 108 हैक्टेयर का एक रकबा पांच वर्षों में हरा–भरा बनाने का चुनौतीपूर्ण कार्य पूरा करना था। लेकिन, ईको टास्क फोर्स ने युद्ध–स्तर पर कार्य करते हुए, इस प्रोजैक्ट को 18 माह के रिकार्ड समय में ही सफलतापूर्वक पूरा कर लिया। फोर्स की इस सफलता को देखते हुए हिमाचल प्रदेश सरकार तथा प्रदेश वन विभाग द्वारा ब्यास नदी बेसिन के लिए भी ऐसी ही कम्पनी स्थापित करने की मंजूरी दी गई। परिणाम स्वरूप 26 जुलाई, 2010 को ब्यास–बेसिन के लिए ईको टास्क फोर्स की एक अतिरिक्त कम्पनी अस्तित्व में आई।

ईको टास्क फोर्स द्वारा हिमाचल प्रदेश वन विभाग से बेहतर तालमेल व उनसे समय–समय पर प्राप्त तकनीकी जानकारी व सहयोग के बल पर सतलुज व ब्यास बेसिनों के पर्यावरण विकास हेतु सम्पूर्ण जलागम विकास की प्रक्रिया को दक्षतापूर्ण अपना लिया गया है ताकि इन जलग्रहण क्षेत्रों में पौधरोपण के साथ–साथ जल एवं मृदा संरक्षण भी हो सके। जलागम विकास की इस प्रक्रिया में यह भी अनुभव किया गया कि स्थानीय समुदाय को भी इस प्रक्रिया में सम्मिमिलित किया जाए अतः फोर्स द्वारा स्थानीय समुदाय का विश्वास एवं सहयोग अर्जित करने के उद्देश्य से जागरूकता अभियान चलाया गया तथा वन महोत्सव कार्यक्रम भी आयोजित किए गए। यह हमारे लिए संतोष की बात है कि आज स्थानीय लोग न केवल फोर्स के साथ कंधे से कंधा मिला कर कार्य कर रहे हैं अपितु उन्हें मनरेगा के तहत आय का एक अतिरिक्त साधन भी उपलब्ध हो पाया है। ईको टास्क फोर्स, प्रदेश वन विभाग तथा स्थानीय लोगों के आपसी सहयोग के कारण आज इन क्षेत्रों में अवैध कटान तथा वनों में आग की घटनाओं में कमी आई है।

बाढ़ तथा भू–क्षरण भी कम हुआ है और वन तथा गैर–वनोपजों में वृद्धि हुई है।

वन विभाग के तकनीकी सहयोग से आज पौधरोपण हेतु पौधे तैयार करने के मामले में ईको टास्क फोर्स आत्मनिर्भर है। इतने कम समय में ईको टास्क फोर्स द्वारा सतलुज व ब्यास जलागमों में खुद की 13 पौधरोपणियां स्थापित की गई हैं, जिनमें 11.15 लाख पौधे पौधरोपण हेतु उपलब्ध हैं। इसे फोर्स की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जा रहा है।

ईको टास्क फोर्स द्वारा सतलुज व ब्यास जलागमों में पौधरोपण की वर्तमान स्थिति

सतलुज जलागम

क्रम संख्या	वन मण्डल	पौधरोपण हेतु उपलब्ध क्षेत्र, (हैक्टेयर)	पौधरोपण किया	कुल पौधे लगे	जीवित प्रतिशतता	शेष (हैक्टेयर)
1	करसोग	130	130	143000	80–85	–
2	सुकेत	502	502	552000	70–75	–
3	शिमला	249	240	264000	90–95	09
	कुल	801	872	959200		09

ब्यास जलागम

क्रम संख्या	वन मण्डल	पौधरोपण हेतु उपलब्ध क्षेत्र, (हैक्टेयर)	पौधरोपण किया	कुल पौधे लगे	जीवित प्रतिशतता	शेष (हैक्टेयर)
1	सराज	510	296	325600	85–90	214
2	पार्वती	105	50	55000	82–85	55
3	मण्डी	97	67	73700	80–85	30
	कुल	712	413	454300		299

सार

पौधरोपण किया	1285 हैक्टेयर	कुल नर्सरियां	13
नर्सरियों की क्षमता	1115000	चैकडैम बनाए	13
जन जागरण अभियान तथा वन महोत्सव मनाए	6	बायो–इंजिनियरिंग संरचनाएं तैयार की	10000 अगेव के पौधे

133 पैदल वाहिनी (प्रादेशिक सेना) डोगरा, पर्यावरण यूनिट तथा प्रदेशवासियों के लिए यह गर्व का विषय है कि वाहिनी को मिशन ग्रीन में अद्वितीय योगदान के लिए जनरल आफिसर इन कमांडिंग इन चीफ से तीन कमैंडेशन कार्ड एवार्ड हुए हैं। इसमें किसी को कोई संशय नहीं होना चाहिए कि अपनी परम्पराओं के अनुरूप भारतीय सेना से सेवा निवृत्त हुए हिमाचल प्रदेश के यह योद्धा अब पर्यावरण योद्धा के रूप में प्रदेश में पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में भी सफलता प्राप्त कर माँ वसुंधरा को अपनी आहुती देने में कोई कोर–कसर बाकी नहीं रहने देंगे।

कालाटोप–खज़ियारः पक्षियों के लिए आदर्श प्राकृतिक वास

– **सुरजीत पठानिया,** वन्यप्राणी रक्षक

हिमाचल प्रदेश के ज़िला चम्बा में समुद्रतल से 1960 मीटर की ऊंचाई पर स्थित कालाटोप व खज़ियार 69 वर्ग कि.मी. का एक ऐसा संरक्षित क्षेत्र है, जिसे जैव–विविधता सम्पन्नता के कारण राष्ट्रीय महत्व की लघु वैटलैण्ड घोषित किया गया है। खज़ियार का नाम इस क्षेत्र में पूजनीय स्थानीय देवता खाज़ी नाग जी के नाम से पड़ा माना जाता है। इसी प्रकार कालाटोप का नाम शायद इस क्षेत्र के शिखर पर विद्यमान देवदार के घने वृक्षों से उत्पन्न काली छाया के कारण पड़ा प्रतीत होता है। इस क्षेत्र की समृद्ध जैव–विविधता के कारण 23 अक्तूबर, वर्ष 1999 में इसे वन्यप्राणी शरण्य घोषित किया गया था। खज़ियार में एक प्राकृतिक झील है जिसके चारों ओर देवदार के घने वन अतुल्य प्राकृतिक छटा प्रस्तुत करते हैं, इसी कारण इसे मिनी स्विटज़रलैंड की संज्ञा दी गई है। हमारी वसुंधरा पर शायद ही ऐसा कहीं और होगा, तभी तो देश–विदेश से लाखों पर्यटक प्रतिवर्ष यहां आते हैं।

खज़ियार का तापमान सर्दियों में, कई बार शून्य से 10 डिग्री नीचे तक चला जाता है और गर्मियों में 25 डिग्री सैल्सियस तक पहुंचता है। यहां पर औसतन वर्षा 800 मिली मीटर तक रिकार्ड की गई है। खजियार झील में मिरर कार्प नामक मछलियां पाई जाती हैं जो बड़ी संख्या में प्रवासी पन कौवों को प्रवास हेतु आकर्षित करती हैं। यहां पाई जाने वाली वनस्पति प्रजातियों में देवदार, फर, स्प्रूस, ओक, बुरांश तथा मिश्रित चौड़ी पत्ती प्रजाती के वन प्रमुख हैं। इसी प्रकार यहां उपलब्ध वन्यप्राणियों में काला भालू, तेंदुआ, जंगली बिल्ली, घोरल, कक्कड़, कस्तूरी मृग, हिमालयन चिमगादड़ तथा हिमालयन पाम सिवट आदि सम्मिलित हैं।

आपको यह जान कर अचरज होगा कि इस छोटे से क्षेत्र में पक्षियों की एक सौ से भी अधिक प्रजातियां पाई जाती हैं जिनमें मोनाल, कलीज, कोकलास तथा चीर जैसी मुर्ग प्रजातियों सहित अधिकतर स्थानीय प्रजातियां आती हैं। खज़ियार झील, हिमालय पार से भारतवर्ष की ओर प्रतिवर्ष देशान्तर करने वाले प्रवासी जल पक्षियों की राह में पड़ती है। इन प्रवासी पक्षियों को यहां सुरक्षा, भोजन तथा जैव–विविधता सम्पन्न प्राकृतिक आवास–स्थल प्राप्त होता है, इसलिए अनेक मेहमान पक्षी प्रजातियां यहां अक्तूबर माह से लेकर कुछ माह तक शरदकालीन प्रवास करती हैं और पौंग व अन्य गन्तव्यों को रवाना हो जाती हैं। प्रवासी पक्षी प्रजातियों में, भूमि तथा जल या दोनों में निवास करने वाली प्रजातियां शामिल हैं, जिनमें कॉमन पोचार्ड, कॉमन टील, गडवाल, मलार्ड, लार्ज कार्मोरेंट, बार हैडिड गूज़ प्रमूख हैं।

कालाटोप–खज़ियार वन्यप्राणी क्षेत्र की लगातार निगरानी करते हुए हमने यहां होने वाली प्रत्येक हलचल की सूक्ष्मतम जानकरी एकत्र करने का प्रयत्न किया। हमने पाया कि गर्मियों में निचले क्षेत्रों के तथा सर्दियों में ऊंचाई वाले क्षेत्रों के देशी पक्षी भी प्रतिवर्ष यहां आते हैं जिनमें ऐशी ड्रोंगो, बार टेल्ड ट्री–क्लीपर, ब्लैक बुलबुल, ब्लैक एंड यैलो ग्रौसबैक, ब्लैक हैडिड जे, ब्लैक विंग्ड स्टिल्ट, ब्लू व्हिसलिंग थ्रश, ब्लू कैप्ड रैड स्टार्ट, चैस्टनट बैलिड रॉकथ्रश, चकोर, कामन हूपू, इयूरेशिन जे, ग्रेट बारबेट, , ग्रीन बैक्ड टिट, ग्रे बुश चैट, ग्रे हैडिट कैनरी फ्लाई कैचर, ग्रे विंग्ड ब्लैक बर्ड, हिमालयन बुलबुल, लिटल पाईड फॅलाई कैचर, लॉग टेल्ड मिनीवेट, आरैंज फलैंक्ड बुश रॉबेन, ओरियैन्टल टर्टल डव, प्लमबियस वाटर रैडस्टार्ट, रॉक पिज़न, रसैट स्पैरो, स्केली थ्रश, स्केली बैलिड वुडपैकर, स्लेटी हैडिड पैराकीट, स्ट्रीक्ड लाफिंग थ्रश, वर्डिटर फ्लाईकैचर, व्हाईट वैगटेल, व्हाईट कैप्ड वाटर रैडस्टार्ट, व्हाईट थ्रोटिड लाफिंग थ्रश, यैलो बिल्ड ब्लू मैगपाई, यैलो क्राउंड वुडपैकर आदि प्रमुख हैं। इतनी पक्षी धरोहर की प्राकृतिक आवास स्थली होने के कारण यदि यूं कहा जाए कि कालाटोप–खज़ियार वन्यप्राणी शरण्य सभी पक्षियों का स्वर्ग है तो कोई अतिश्योक्ति न होगी।

वन संरक्षण अधिनियम–1980 की उपयोगिता

–कल्याण सिंह शक्तान, हि.प्र.व.से.

भारतवर्ष में स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत चयनित सरकारों का पूरा ध्यान कृषि तथा उद्योग विकास की ओर केन्द्रित हुआ जिसके परिणाम स्वरूप प्राकृतिक संसाधनों विशेषकर वन भूमि पर दबाव बढ़ना आरम्भ हुआ। वर्ष 1980 में भारत सरकार के कृषि मंत्रालय द्वारा करवाए गए एक अध्ययन के अनुसार वर्ष 1980 तक लगभग 7 लाख हैक्टेयर वन भूमि पर अवैध कब्ज़ा किया गया था, इसमें वह भूमि सम्मिलित नहीं है,जहां हुए कब्ज़ों को विभिन्न सरकारों ने नियमित कर दिया था। इतना ही नहीं वर्ष 1951 से 1980 के मध्य विभिन्न कार्यों, विशेषकर कृषि के लिए लगभग 43 लाख हैक्टेयर वन भूमि स्थानांत्रित की गई। इतनी अधिक मात्रा में वन भूमि के गैर–वानिकी कार्यों में उपयोग होने की वजह से इस दिशा में राष्ट्र की चिंता स्वभाविक थी।

यदि हम अपने प्रदेश पर नज़र डालें तो यहां भी स्वतंत्रता से ले कर वर्ष 1980 के मध्य लगभग 1 लाख हैक्टेयर वन भूमि का उपयोग गैर–वानिकी कार्यों के लिए किया गया, जिसमें अवैध कब्ज़ों का नियमितिकरण, सड़क निर्माण, कृषि, बिजली व टैलीफोन की लाइन आदि जैसे कार्य प्रमुख हैं। इसके विपरीत वर्ष 1981 से फरवरी 2012 तक मात्र 10335 हैक्टेयर वन भूमि केन्द्र सरकार की अनुमति से गैर–वानिकी कार्यों के लिए स्थानांतरित की गई। यह वन संरक्षण अधिनियम के लागू होने से ही सम्भव हो पाया है। उपरोक्त सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इन्दिरा गांधी की अध्यक्षता में वन संरक्षण अधिनियम 25 अक्तूबर, 1980 से जम्मू–कश्मीर को छोड़कर पूरे भारतवर्ष में लागू किया गया।

वन संरक्षण अधिनियम वनों को अन्धाधुन्ध कटान तथा नाजा़यज कब्ज़ों से बचाने के लिए बनाया गया है। वनों के अन्धाधुन्ध कटान ने पर्यावरण असंतुलन को जन्म दिया है, जिसके कारण समाज को खतरा उत्पन्न हो गया है। अतः अनियन्त्रित वन कटान व लगातार बढ़ते नाजा़यज कब्ज़ों को तुरन्त रोका जाना आवश्यक है।

भारतवर्ष में वन क्षेत्र बढ़ाने के विषय में चिन्तन वर्ष 1952 की राष्ट्रीय वन नीति के समय से ही आरम्भ हो गया था। इस नीति के अनुसार कुल भौगोलिक क्षेत्र में से पहाड़ी क्षेत्रों का 60 प्रतिशत तथा मैदानी क्षेत्रों का 20 प्रतिशत हिस्सा वनों से ढका होना चाहिए। इसी के दृष्टिगत हिमाचल प्रदेश सरकार ने भी वर्ष 1988 तथा 2005 में राज्य वन नीति बनाई है जिसके अनुरूप लगातार वन आवरण वृद्धि के प्रयास किए जा रहे हैं।

वन संरक्षण अधिनियम के अनुसार किसी भी प्रकार की वन भूमि के गैर–वानिकी उद्‌देश्य के लिए इस्तेमाल करने से पहले केन्द्र सरकार की अनुमति आवश्यक है। यह पाबन्दी वन भूमि को खोदने, वन रहित करने, इस पर चाय, काफी, मिर्च, रबर, खजूर आदि के लिए उपयोग तथा किसी भी संस्था को वन भूमि पट्‌टे पर देने पर लागू है। पूर्व में दिए गए पट्‌टे के नवीकरण पर भी यह लागू होता है। यहां हमें यह जानना आवश्यक हो जाता है कि वन भूमि तथा गैर–वानिकी कार्यों से क्या अभिप्राय है।

वन भूमि के अन्तर्गत समस्त रिज़र्व यानी आरक्षित तथा प्रोटैक्टिड यानी संरक्षित जंगल जिनमें सीमांकित तथा असीमांकित दोनों शामिल हैं, तथा अन्य वन जिन्हें राजस्व रिकार्ड में वन दिखाया गया है, आते हैं। इसके अतिरिक्त वे क्षेत्र भी इसमें शामिल हैं जिन्हें राज्य सरकार ने किसी अधिसूचना के तहत वन घोषित किया है । हिमाचल प्रदेश के मामले में वर्ष 1952 की अधिसूचना भी लागू होती है, जिसके तहत समस्त भूमि (सिवाए निजी भूमि के) को वनभूमि माना गया है। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि समस्त सरकारी भूमि चाहे वह सरकारी राजस्व रिकार्ड में जिस किसी नाम से भी दर्ज हुई हो के ऊपर , वन संरक्षण अधिनियम लागू होगा।

गैर–वानिकी कार्य का अभिप्राय है कि किसी वन भूमि का प्रयोग पुनः पौधरोपण के अतिरिक्त किन्हीं अन्य कार्यों के लिए नहीं किया जा सकता। भूमि का खोदना तथा इसे वन रहित करना और ऐसी भूमि का इस्तेमाल चाय, कॉफी, मिर्च, रबर और ताड़ की खेती के लिए उपयोग करना गैर–वानिकी कार्य माना गया है। फलदार पौधों, तेल उत्पादक पौधों तथा औषधीय पौधों की खेती के लिए केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति की आवश्यकता होगी, केवल उन परिस्थितियों को छोड़कर, जहां उगाई जाने वाली प्रजाति

उस क्षेत्र की मूल प्रजाति है या इस तरह का पौधरोपण क्षेत्र के सम्पूर्ण पौधरोपण कार्यक्रम का हिस्सा है। यही नहीं, वन संरक्षण अधिनियम निजी वन भूमि पर भी लागू होता है। इस संदर्भ में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने एक अहम फैसले में यह राय व्यक्त की है कि समाज का हित व्यक्तिगत हित से कहीं बढ़कर है।

अब प्रश्न यह उठता है कि केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति धारा (2) के तहत क्यों आवश्यक है ? जैसा कि हम जानते हैं कि इस अधिनियम के तहत राज्य सरकार के पास कोई अधिकार नहीं है तथा दूसरे वन भूमि को खोदे जाने से तथा उस पर खड़े पेड़ों को काटने से नया पौधरोपण बुरी तरह प्रभावित होता है, ऐसी अवस्था में अनुमति देते समय देश की अर्थव्यवस्था को होने वाले फायदे तथा नुकसान को सामने रखा जाता है। यह तो सर्वविदित है कि इस नुकसान से पर्यावरण , पारिस्थितिकी वनस्पति तथा जीव–जन्तुओं पर क्या–क्या असर होगा। इसलिए यह विचार आया कि वन क्षेत्रों पर अधिकार केन्द्र सरकार का रहे। इस तरह यदि प्रदेश सरकार भी किसी क्षेत्र को अनारक्षित करवाना चाहे और उसे गैर–वानिकी कार्यों में इस्तेमाल करना चाहे तो उसे भी केन्द्र सरकार की अनुमति लेना आवश्यक है।

उपरोक्त प्रावधान को किसी गलत परिप्रेक्ष्य में न समझा जाए, यहां केन्द्र सरकार की मंशा नियंत्रित करने की है न कि विकास कार्यों को बन्द करने की। यह ठीक उसी प्रकार है जैसे किसी भी कर्मचारी को अपनी भविष्य निधि से निकालने के लिए सक्षम अधिकारी की स्वीकृति लेनी पड़ती है। इसका मतलब यह तो नहीं है कि आपके अपने पैसे को आपके अपने इस्तेमाल के लिए उपयोग पर कोई रोक है। इसका नियंत्रण तो आपकी भलाई के लिए किया जाता है।

क्या कोई ऐसे कार्य हैं जो वन भूमि के अन्दर केन्द्र सरकार की बिना पूर्वानुमति के किए जा सकते हैं अधिनियम के तहत इस दिशा में कुछ स्पष्टीकरण दिए गए है। यदि भूमि में वन और वन्यप्राणी के प्रबन्धन, विकास तथा संरक्षण सम्बन्धित कोई कार्य किया जाना हो , जैसे चैक पोस्टों की स्थापना, फायर लाइन, बेतार संचार सुविधाएं, बाड़ का निर्माण, पुल व बांध निर्माण, पानी की व्यवस्था, नालियां इत्यादि। उक्त कार्य तभी सम्भव हैं जब ऐसा करते समय वन एवं वन्यप्राणियों का विकास, संरक्षण तथा प्रबन्धन को ध्यान में रखा गया है। अतः ऐसी अवस्था में केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

ऐसे मामले जिनमें राज्य सरकार ने 25–10–1980 से पूर्व किसी परियोजना के संदर्भ में भूमि स्थानांतरण या अनारक्षण के स्पष्ट आदेश दिए हों, ऐसी दशा में इन्हें केन्द्र सरकार को भेजने की आवश्यकता न होगी। परन्तु यदि केवल प्रशासनिक स्वीकृति दी गई है और भूमि के अनारक्षण तथा स्थानान्तरण के कोई आदेश न दिए गए थे ऐसी अवस्था में केन्द्र सरकार की स्वीकृति अनिवार्य समझी जाएगी।

घास चारा, फलियां जो प्राकृतिक तौर पर वनों में उगती हैं, बिना वृक्ष प्रजाति को नुकसान पहुंचाए उन्हें काटने के लिए केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु यदि ऐसे क्षेत्रों को किसी संस्था, व्यक्ति को पट्टे पर देना है तो अधिनियम के तहत स्वीकृति की आवश्यकता होगी।

विकास परियोजनाओं के अनुसंधान तथा निरीक्षण जैसे प्रेषण लाइनें, जल विद्युत परियोजनाएं, भूकम्पीय निरीक्षण, तेल आदि की खोज के लिए छिद्र करना, इन सभी में वन संरक्षण अधिनियम के प्रावधान नहीं लगेंगे जब तक कि इसमें वनों का दोहन, पेड़ों का कटान तथा किसी भी तरह का वन नुकसान शामिल न किया हो। ऐसे कार्यक्रमों के दौरान पेड़ों की टहनियों की छांग तथा झाड़ियों की सफाई इस आशय से ताकि आगे देखने में कोई बाधा न आए, की जा सकती है। परन्तु यदि उपरोक्त अनुसंधान तथा निरीक्षण के दौरान वन क्षेत्र का खाली करवाना या पेड़ों का कटान शामिल हो, तो ऐसी अवस्था में केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति अनिवार्य मानी जाएगी। निरीक्षण तथा अनुसंधान के संदर्भ में पूर्व में कहे प्रावधानों के होते हुए भी वन्यप्राणी शरण्यस्थलों, राष्ट्रीय उद्यानों तथा सैम्पल प्लाटों, जिन्हें वन विभाग ने चिन्हित किया हो, के अन्दर कोई भी अन्वेषण का कार्य नहीं किया जाएगा यदि ऐसा कार्य करना जरूरी हो तो ऐसी अवस्था में केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति प्राप्त करनी होगी चाहे इसमें वृक्षों का कटान संलिप्त है या नहीं।

यदि वन क्षेत्र के भीतर कोई वास्तविक निर्माण का कार्य होना है, उसमें वन संरक्षण अधिनियम के प्रावधान लागू होंगे, चाहे इसमें कोई भी पेड़ नहीं काटा जा रहा है। यह भी स्पष्ट किया जाता है कि निरीक्षण तथा अनुसंधान की स्वीकृति से यह कदापि न समझा जाए कि केन्द्र सरकार ने अनारक्षण की अनुमति दे दी है। जैसा कि उपरोक्त चर्चा में

बार–बार आया कि कुछ कार्यों को करते समय वन संरक्षण अधिनियम के प्रावधानों के तहत केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति की आवश्यकता नहीं होती, इससे यह न समझा जाए कि कोई भी व्यक्ति या संस्था जब चाहे काम शुरू करवा सकती है। बल्कि ऐसी प्रत्येक अवस्था में स्थानीय प्रशासन/संबन्धित अधिकारियों/अथॉरिटीज से स्थानीय अधिनियमों तथा नियमों के तहत मंजूरी लेनी आवश्यक है।

यहां यह बताना आवश्यक है कि राज्य सरकार को भी वन संरक्षण अधिनियम में कुछ शक्तियां प्राप्त हैं। इसमें वन संरक्षण अधिनियम की धारा–2 के तहत कुछ कार्यों को करवाने के लिए आम स्वीकृति दिनांक 3 जनवरी, 2005 के दिशा निर्देशानुसार दी गई है, इनमें स्कूल निर्माण, डिस्पैंसरी/अस्पताल, विद्युत व संचार लाईनें, पीने का पानी, जल/वर्षा जल को एकत्र करने के लिए किया जाने वाला निर्माण, सूक्ष्म सिंचाई नहर का निर्माण, ऊर्जा के गैर–पारम्परिक स्त्रोत, व्यवसायिक प्रशिक्षण केन्द्र, विद्युत सबस्टेशन, सूचनाओं के आदान–प्रदान के लिए चौकियों का निर्माण, पुलिस स्टेशन/चौकी/सीमा पर चौकी का निर्माण और संवेदनशील क्षेत्रों में बुर्जी या वाच टॉवर का निर्माण शामिल है। उपरोक्त किसी भी कार्य को करने के लिए वन भूमि का क्षेत्र एक हैक्टेयर से कम होना चाहिए और वृक्षों का कटान 50 से कम होना चाहिए। ऐसे मामलों में स्वीकृति राज्य सरकार द्वारा दी जाएगी। ऐसे मामलों में उपभोक्ता एजेन्सी को नियम–6 के तहत निर्धारित प्रपत्र पर निवेदन करना होगा। ऐसे कार्य/परियोजना प्रधान मुख्य अरण्यपाल द्वारा अनुमोदित होनी चाहिए। यह छूट राष्ट्रीय उद्यान तथा वन्यप्राणी शरण्य स्थली पर लागू नहीं होगी। यह आम अनुमति 31 दिसम्बर, 2006 तक दी गई थी और अब इसे 31 दिसम्बर 2013 तक बढ़ाया गया है।

कुल मिला कर यदि यह कहा जाए कि वन संरक्षण अधिनियम–1980, वन भूमि के संरक्षण, तथा समस्त जीवों व मानवता के संरक्षण के लिए बनाया गया है, तो अनुचित न होगा।

फार्म–1 नियम 3 देखिए

1.	प्रकाशन का स्थान	शिमला
2.	प्रकाशन अवधि	छः मासिक
3.	मुद्रक का नाम	सतीश गुप्ता
4.	राष्ट्रीयता	भारतीय
5.	पता	वन मण्डल अधिकारी, प्रचार वन मण्डल, शिमला–171002
6.	संपादक का नाम	सतीश गुप्ता
7.	राष्ट्रीयता	भारतीय
8.	पता	वन मण्डल अधिकारी, प्रचार वन मण्डल, शिमला–171002
9.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशता या अधिक के साझेदार हों	वन विभाग हिमाचल प्रदेश सरकार
10.	मुद्रणालय का नाम	वन विभाग, मुद्रणालय, कालाघाट, सोलन, हि. प्र. तथा सवितार प्रैस, 820, फेज़ 2, इन्डस्ट्रीयल एरिया, चण्डीगढ़

मैं, सतीश गुप्ता एतद् द्वारा घोषणा करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

सतीश गुप्ता
वन मण्डल अधिकारी,
प्रचार वन मण्डल, शिमला–2

मानव–वन्यजीव अन्तर्द्वन्द्व

डॉ. संदीप रतन

मनुष्य की धरती पर सर्वश्रेष्ठता स्थापित करने की होड़ कभी न खत्म होने वाली प्रक्रिया है। मानव के इस हस्तक्षेप का असर समस्त धरा पर पड़ता है। इस प्रक्रिया में लगातार बढ़ती जनसंख्या ने प्राकृतिक वासस्थलों पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। आज अनेक प्रजातियां विलुप्त होने के कगार पर है और विलुप्तता की सूची में कलमबद्ध हो रही हैं। इतने बड़े स्तर पर प्राकृतिक आवास के विनाश के कारण असंतुलन इतना बढ़ गया है कि आज अनेक प्रजातियों में अप्रत्याशित वृद्धि देखी जा रही है। अनेक विचारक जनसंख्या विस्फोट के असली कारण की जांच किए बगैर प्रजातियों की आपसी प्रतिस्पर्धा को इसका कारण मानते हैं। इसका एक ज्वलंत उदाहरण हमारे चारों ओर

बन्दरों, यानी, रहेसस मकाक (मकाका मुलाटा मुलाटा) की दिनों–दिन बढती संख्या है।

बन्दर आज सभी की आंख की किरकिरी बनते जा रहे है। वानरों तथा अन्य तेजी से बढ़ती प्रजातियों के प्रति हमारी सहनशीलता के सभी बांध टूट रहे हैं। वानरों के साथ हमारा व्यवहार ऐसा है मानों ये किसी अन्य ग्रह के प्राणीं हों। लेकिन वानरों ने अनेक वर्षों से थ्योरी आफ ईवोलूशन यानी उत्पत्ति के सिद्धांत को सही मायनों में सिद्ध किया है। इन्होंने, प्रतिकूल तथा कठोरतम प्राकृतिक परिस्थितियों में भी जीवित रहने की कला सीख ली है। इनकी पहुंच में जो भी खाद्यपदार्थ आया उसे खा कर ये जीवित रहते हैं। वानर, जीवनयापन के आसान तरीकों को अपना कर हमारे सहभोजी के रूप में विद्यमान हैं। लेकिन क्या इस प्रजाती की लगातार बढ़ती संख्या एक तथ्य है या फिर वानर भी अपने प्राकृतिक आवास की कठिन परिस्थितियों से विरक्त हो कर जीवन यापन की आसान परिस्थितियों की ओर पलायन कर रहे हैं, जो मनुष्य ने जाने–अनजाने में इन्हें प्रदान की हैं। सच्चाई जो भी हो, लेकिन हमें अपनी वसुन्धरा को वानरों के साथ बांटने में कठिनाई का अनुभव हो रहा है। यह परिदृश्य आज हमारे परिवेश तक ही सीमित न रह कर, विश्वव्यापी विकराल रूप धारण करता जा रहा है। वानर समस्या के समाधान के उपायों के तहत, अवांछित बन्दरों की छंटाई, प्राईमेट प्रोटैक्शन पार्क स्थापित करना जैसे प्रयोग अपनाए गए, लेकिन वास्तव मे अभी तक कोई खास सफलता प्राप्त नहीं हो पाई है।

अभी तक बन्दर समस्या आरोप–प्रत्यारोप तक ही सीमित रही है, इस समस्या का सार्थक समाधान ईमानदारी से किए जाने वाले प्रयासों से ही सम्भव हो पाएगा। लेकिन, एक बात तो स्पष्ट है कि अभी तक इस समस्या के समाधान का कोई एक निश्चित व कारगर तरीका नहीं मिल पाया है। पिछले कुछ वर्षों में इस समस्या के ठोस समाधान हेतु केवल सरकारी प्रयास ही किए गए है और गैर–सरकारी तथा अन्य समान विचारधारा वाले लोगों की भागेदारी लगभग नगण्य रही है। मानव समस्याओं के समाधान खोजने वालों की ओर से वानर समस्या के समाधान के लिए सुझाए गए अनेक विकल्पों को अपनाने में भी कोई खास सफलता प्राप्त नहीं हो पाई है। इस समस्या से प्रभावित लोगों का मानना है कि वानर समस्या का समाधान करना सरकार व वन विभाग का काम है, ऐसी निरूत्साहित सोच इस समस्या के समाधान में एक बड़ी बाधा रही है।

वन विभाग द्वारा इस समस्या के समाधान हेतु बहुआयामी रणनीति अपनाई गई है जिसके तहत आधारभूत प्रबन्धन से लेकर बन्दरों की नसबन्दी तक के कदम उठाए जा रहे हैं। इस दिशा में अपनाए जा रहे उपायों में जहां एक ओर वानर नसबन्दी जैसे तकनीकी कार्य करना विभाग का काम है वहीं दूसरी ओर, बन्दरों को अप्राकृतिक भोजन देना, कूडा–करकट प्रबन्धन, वानरों के प्राकृतिक आवास को संरक्षित रखना तथा वन्यप्राणियों के प्रति सकारात्मक सोच जैसे अनेक कार्यों में समाज के प्रत्येक वर्ग का सहयोग

आवश्यक है। लेकिन अभी तक तो दोनों ओर से कोई ठोस परिणाम प्राप्त नहीं हो पाए हैं। यदि यूं कहा जाए कि इस दिशा में अभी तक हम सफल नहीं हो पाए हैं तो कोई अतिश्योक्ति न होगी।

इस समस्या के समाधान की दिशा में वानर नसबन्दी कार्यक्रम को जादू की छड़ी माना जा रहा है। नसबन्दी द्वारा वानरों की संख्या का नियंत्रण यद्यपि वानर समस्या के समाधान की एक विधि हो सकती है, तथापि एकाएक यह वानर आतंक को समाप्त कर दे, ऐसा लगता तो नहीं। यह एक दीर्घकालीन योजना है जिसके परिणाम भविष्य में दिखाई देंगे और वह भी तब, जब वानर नसबन्दी काफी संख्या में की जाएगी। तकनीकी रूप से सामान्यतः किसी भी खास वानर–समूह के कम–से–कम 80 प्रतिशत बन्दरों की नसबन्दी हो जानी चाहिए लेकिन इस दिशा में अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। इसका सबसे बड़ा कारण शायद यह है कि बन्दर पकड़ने के लिए परम्परागत तकनीक का ही प्रयोग किया जा रहा है, जिसमें अभी बहुत अधिक सम्भावना नहीं लगती। इसे अधिक प्रभावी बनाने के लिए सभी को, विशेषकर कृषि एवं बागवानी जैसे प्रभावित विभागों तथा स्थानीय समुदायों को मिल कर कार्य करना होगा। केवल बन्दर नसबन्दी कार्यक्रम से यह समस्या शीघ्र हल होने वाली नहीं, अपितु इसमें तो प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से प्रभावित सभी को किसी न किसी रूप में सहयोग करना होगा तभी कुछ हल हो सकता है।

हमें, कूड़ा प्रबन्धन की दिशा में ठोस कदम उठाने होंगे और यह भी सुनिश्चित करना होगा कि बन्दरों को इधर–उधर खाने की वस्तुएं न परोसी जाएं। राजमार्गों तथा मन्दिरों को जाने वाले रास्तों पर ब्रेड–चना आदि बेचने वालों को निरूत्साहित करने वाले नियमों का कड़ाई से पालन करना इस दिशा में पहला कदम होगा ताकि वानरों को अप्राकृतिक खाद्य–सामग्री सरलता से उपलब्ध न हो और वे अपना रूख अपनी प्राकृतिक आवास स्थली, वनों, की ओर कर सकें। आरम्भ में ऐसा करते हुए हमें वानरों के आपसी–टकराव तथा हिंसक व्यवहार जैसी कुछ दिक्कतों का सामना भी करना पड़ सकता है। लेकिन वनों में प्राकृतिक खाद्य सामग्री की उपलब्धता बढ़ा कर इससे निपटा जा सकता है। इसके अलावा, वानर प्रभावित कृषि एवं बागवानी क्षेत्रों में भी फसलों में बदलाव द्वारा इस समस्या का प्रबन्धन किया जा सकता है। ऐसे क्षेत्र, जहां लोगों ने खेती–बाड़ी करना त्याग दिया है, वहां अदरक तथा फूलों की खेती की जाए ताकि आय के साथ–साथ वानर रोधी कार्य भी हो। वानर, अदरक आदि को खाना पसन्द नहीं करते। इसके अतिरिक्त, कृषि भूमि के किनारों में झाड़ियां तथा वनों में व्यापक स्तर पर चौड़ी–पत्ती व फलदार पौधे लगाने होंगे। इन सारी परिस्थितियों के दृष्टिगत, हो सकता हैं कि वानर फिर से अपनी प्राकृतिक

भोजन की ओर रूख करने को बाध्य हो जाएं। वानर समस्या के समाधान पर किए गए प्रयोगों में पाया गया, कि प्राइमेट प्रोटैक्शन पार्कों, अर्थात, वनों में स्थापित वानर वाटिकाओं में लाए गए वानरों ने धीरे–धीरे आस–पास उपलब्ध अप्राकृतिक से प्राकृतिक भोजन को अपनाना आरम्भ किया। इन प्रयोगों से एक रोचक तथ्य सामने आया है कि जो वानर अप्राकृतिक परिस्थितयों में आसानी से प्राप्त होने वाले भोजन पर निर्भर होते हैं उनकी प्रजनन क्षमता समयपूर्व विकसित होती है और जो वानर अपने प्राकृतिक आहार पर निर्भर होते हैं उनके शिशु भी धीरे–धीरे पैदा होते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि वानरों को प्राकृतिक परिस्थितियां व भोजन उपलब्ध करवाने से न केवल

वानर–मानव विवाद को कम किया जा सकता है अपितु वानरों की संख्या भी नियंत्रित की जा सकती है।

वन विभाग को पिछले कुछ समय से शहरों में लंगूरों की एक नई समस्या से जूझना पड़ रहा है । इसे शहरी लंगूर–आतंक भी कहा जा सकता है। शर्मीले स्वभाव वाले लंगूर साधारणतः वनों में ही विचरण करते हैं, लेकिन शहरों में आसानी से उपलब्ध होने वाले अप्राकृतिक भोजन के कारण इन्होंने शहरों को अपना ठिकाना बनाना आरम्भ कर लिया है। शिमला जैसे शहरों में अपने प्राकृतिक व्यवहार के विपरीत, कुछ उत्पाती लंगूर अनेक लोगों को घायल कर चुके हैं, यहां तक की एक व्यक्ति को तो अपनी जान गवानी पड़ी। इन शहरी लंगूरों की विशाल काया, घातक हमले करने की क्षमता व व्यवहार चिंता का विषय बन चुका है। स्थानीय प्रशासन, राजनीतिक लोग व आम जनता यही जानते हैं कि आतंकी लंगूरों को नशीले टीके के माध्यम से पकड़ा जाता है। आज, नशीले टीके के उपयोग द्वारा आतंकी वानरो, लंगूरों व वन्यप्राणियों को पकड़ना, इस समस्या का एक मात्र विकल्प माना जा रहा है। जबकि सत्य यह है कि आतंकी बन्दरों व लंगूरों को पकड़ने के लिए नशीले टीके का उपयोग करना अत्यंत कठिन कार्य है। ये प्राणी एकाएक आक्रमण करते हैं और छतों व वृक्षों आदि पर आसानी से चढ़ जाते हैं। ये इतने समझदार होते हैं कि बन्दूक को दूर से ही पहचान कर आंखों से ओझल हो जाते हैं। इन आतंकी वानरों व लंगूरों को नशीले टीके के उपयोग से काबू करने के लिए बहुत लोगों की आवश्यकता होती है ताकि वे इन पर नज़र रख सकें और टीका लगने के उपरांत बेहोश होने पर बन्दर को ऊंचाई से गिर कर होने वाले नुकसान से बचाया जा सके। ऐसा पाया गया है कि लंगूरों को मानव का अप्राकृतिक सहभोजी होने तथा इनमें मानसून पूर्व होने वाले हार्मोनल बदलावों के कारण इनका व्यवहार खतरनाक हो जाता है।

इस समस्या के सटीक समाधान हेतु हमें आने वाले समय में बहुआयामी रणनीति अपनानी होगी। वानर नसबन्दी, बेशक, इस समस्या के समाधान का एक बहुत अच्छा विकल्प है, लेकिन इसके साथ हमें अन्य विकल्प भी अपनाने होंगे। मानव–वन्यजीव अंर्तद्वंद के समाधान की दिशा में लिए गए किसी भी कदम में लोगों को साथ लेना नितांत आवश्यक है तभी हमें सार्थक परिणाम प्राप्त हो सकेंगे।

बंदर का सामना होने पर

क्या करें . . .

1. बन्दर यदि आप पर खाने की वस्तु छिनने के लिए झपटे तो बन्दर से मुकाबला करने की बजाए, खाद्य सामग्री को दूर फेंक दें।
2. बन्दरों को न तो डराएं, न भागें बल्कि आराम से सीधे खड़े रहें।
3. यदि आप चल रहे हैं तो बन्दर का ध्यान रखते हुए, अपने बाजू व हाथ सहज भाव से खुलें व अपना मुंह और आंखें भूमि की ओर नीचे रखते हुए वहां से धीरे–धीरे निकल लें।
4. बंदरों का प्राकृतिक आवास का संरक्षण करें।

क्या न करें . . .

1. बन्दरों को खाने की वस्तु दिखाकर और फिर उसे वापिस खींचने से बन्दर चिढ़ते हैं। ऐसा न करें।
2. बन्दरों की दिशा में या उनसे दूर न भागें।
3. बन्दरों के पास न तो जाएं, न उन्हें छेड़ें और न ही उनसे डरें।
4. बन्दरों की आंख से आंख न मिलाएं, उन की ओर देखकर न तो हंसे और न ही उन्हें अपने दांत दिखाएं, क्योंकि बन्दर इन्हें एक चुनौती मानते हैं व जवाब में हमला कर सकते हैं।

सार्वजनिक स्थलों पर बन्दरों को खाने की वस्तुएं न देकर बन्दर समस्या के समाधान में अपना सहयोग दें

25 दिसम्बर 2012 को ऐतिहासिक रिज मैदान पर हिमाचल प्रदेश की महामहिम राज्यपाल सुश्री उर्मिला सिंह, श्री ठाकुर सिंह भरमौरी जी को प्रदेश के माननीय वन एवं मत्स्य विभाग मंत्री के रूप में शपथ दिलाते हुए ।

उच्च स्तरीय बैठक में माननीय वन मंत्री जी का स्वागत करते हुए प्रधान सचिव (वन) सुश्री भारती एस सिहाग व प्रधान मुख्य अरण्यपाल श्री आर०के०गुप्ता

विभिन्न कर्मचारी संगठनों के प्रतिनिधि श्री ठाकुर सिंह भरमौरी जी का वन मंत्री बनने पर उनका अभिनन्दन करते हुए

विभागीय कार्यक्रमों को और अधिक गति प्रदान करने हेतु बुलाई गई अरण्यपालों की बैठक की अध्यक्षता करते हुए प्रधान मुख्य अरण्यपाल, श्री आर.के.गुप्ता

राज्य स्तरीय रैड क्रॉस दिवस के उपलक्ष्य में रानी झांसी पार्क शिमला में वन विभाग द्वारा लगाई गई प्रदर्शनी में वन अधिकारी महिला कल्याण समिति की सदस्य हिमाचल प्रदेश की महामहिम राज्यपाल सुश्री उर्मिला सिंह को गतिविधियों से अवगत करवाते हुए।

कुल्लू दशहरा के दौरान प्रचार वन मण्डल, शिमला द्वारा लगाई गई विभागीय प्रदर्शनी का अवलोकन करते हुए महामहिम राज्यपाल सुश्री उर्मिला सिंह

ग्रेट हिमालयन राष्ट्रीय उद्यान को यूनैस्को विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित करने के मूल्यांकन हेतु प्रदेश में आई.यू.सी.एन. के प्रतिनिधि डॉ. ग्रेम.एल. वर्बाएज तथा प्रधान सचिव (वन) सुश्री भारती एस सिहाग विचार विमर्श करते हुए

चम्बा में आयोजित 18वीं राज्य स्तरीय वन खेल–कूद एवं ड्यूटी प्रतियोगिता के अवसर पर मार्च पास्ट की सलामी लेते हुए प्रधान सचिव (वन) सुश्री भारती एस सिहाग।

वन्यप्राणी सप्ताह–2012 के दौरान हिमाचल प्रदेश के मुख्य सचिव श्री सुदृप्त राय स्मारिका का विमोचन करते हुए।

हिमालयी राज्यों में वन प्रबन्धन के अध्ययन हेतु हिमाचल पहुंचे भारतीय वन सेवा प्रशिक्षणार्थियों को प्रदेश के वनों की जानकारी देते हुए प्रधान मुख्य अरण्यपाल हि.प्र. श्री आर.के.गुप्ता

विश्व बैंक के सहयोग से आरम्भ की गई मध्य हिमालय जलागम विकास परियोजना के तहत जलसंग्रह का दृश्य

जापान के सहयोग से चलाई जा रही 'स्वां नदी (ऊना) समन्वित जलागम विकास परियोजना' के तहत निर्मित बांध

ज़िला कुल्लू के सैंज में 14 अगस्त को आयोजित 63वें राज्य स्तरीय वन महोत्सव के उपलक्ष्य में देवदार का पौधा रोपित करते हुए प्रधान मुख्य अरण्यपाल हि.प्र. श्री आर.के.गुप्ता

वन प्रशिक्षण संस्थान एवं रेंज़र्स कालेज सुन्दरनगर देश का 6वां रेंज़र्स कॉलेज बन गया है जो वानिकी प्रशिक्षण के क्षेत्र में एक मील का पत्थर साबित होगा।

प्रदेश में चार बन्दर नसबन्दी केंद्रों के माध्यम से दिसम्बर 2012 तक 60071 बन्दरों की नसबन्दी की गई।

हि.प्र. के सेवानिवृत्त सैनिकों की 133 इन्फैंट्री बटालियन (टी.ए.) डोगरा ईको बटालियन द्वारा प्रदेश के 1285 हैक्टेयर क्षेत्र में पौधरोपण

पवित्र पीपल

– डॉ. दीपराज शास्त्री,
सरस्वती निवास, नार्थ ऑक, संजौली, शिमला, हि.प्र.

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणाम् देवर्षीणां च नारदः ।।26/10 गीता

भगवद् गीता में भगवान श्री कृष्ण जी ने पीपल को अश्वत्थः सर्ववृक्षाणाम् कहकर सब वृक्षों में सर्वोपरि स्थान दिया है।

विष्णु पुराण में वृक्षों के प्रसंग पीपल के महत्व का उल्लेख किया गया है। पीपल का वृक्ष भगवान विष्णु का प्रतीक है। अर्थात् पीपल का वृक्ष संसार के प्राणियों का चालक है। इसके अतिरिक्त ब्रह्मा और शिव का निवास भी इस वृक्ष के भिन्न–2 भागों में माना गया है। इस वृक्ष की विशालता का बोध कराते हुए यह भी कहा गया है कि जिस प्रकार एक नन्हें से बीज में विशाल पीपल का वृक्ष छिपा है, उसी प्रकार ब्रह्मा में सारा ब्रह्मांड समाहित है।

बिहार में बोधगया नामक पौराणिक तीर्थस्थल पर प्राचीन विशालकाय पीपल का वृक्ष बौद्ध मंदिर के पार्श्व भाग में स्थित है। कहा जाता है कि भगवान गौतम बुद्ध को इसी वृक्ष के नीचे बुद्धत्व की प्रप्ति हुई थी। जब उन्हें बोध हुआ तो इस वृक्ष के सघन पत्ते आनन्द से झूम रहे थे। तभी से इस वृक्ष को बोधिवृक्ष कहा जाने लगा।

प्रकृति की देन में घने पत्तों वाला एवं छायादार सुन्दर यह पीपल का वृक्ष अति प्राचीन वृक्ष है। इसको कई नामों से पुकारा जाता है जैसे–पीपल, पीपर, ब्रह्मा का पेड़ और संस्कृत में अश्वत्थः, पीप्पलः। इसका वानस्पतिक नाम फाईकस रिलीजिओसा है। अंग्रेजी में इसे पापलस सेक्रेड ट्री कहते हैं।

वैज्ञानिक दृष्टि से पीपल का वृक्ष करीबन प्रतिदिन 20 से 22 घण्टे आक्सीजन प्रदान करता है । एक अनुमान के अनुसार एक बड़ा भरपूर हरा–भरा पीपल का वृक्ष एक वर्ष में करीबन 80 से 90 हजार रूपए की आक्सीजन देता है। पीपल के पत्ते धूल के कणों को वायुमण्डल से अपनी ओर आकर्षित करते हैं तथा कार्बनडाइआक्साइड के प्रदूषण व अन्य जहरीली गैसों के प्रदूषण को भी कम करते है। धूलरहित निर्मल स्वच्छ वातावरण बनाने में पीपल वृक्ष का विशेष महत्व है। भारतीय दर्शन में ऋषियों ने इस महान वृक्ष के महत्व को समझते हुए हमारी दैनिक परम्परा को प्रकृति से जोड़ा ताकि इस वृक्ष का संरक्षण होता रहे और स्वतः ही प्रदूषण सम्बन्धी समस्या का निदान होता रहे। अध्यात्मिक दृष्टि से पीपल का वृक्ष विशेष लाभकारी बताया गया है। अतः पीपल के वृक्ष अधिक से अधिक लगाएं और अपने चारों ओर के वातावरण को खुशहाल बनाएं।

पीपल के वृक्ष की छाल, पत्ते और लकड़ी मनुष्य के लिए अनेक प्रकार से उपयोगी और लाभदायक है। इसकी छाल से निकाला गया रस दांतों व मसूड़ों के लिए लाभदायक माना गया है। सर्दियों में छाल, पत्ते व लकड़ी का रस उबाल कर पीने से सर्दी–जुकाम खांसी में राहत मिलती है। आओ हम प्रकृति की इस अद्भुत वनस्पति को सुरक्षित रखें व मानव जीवन को सुखद बनाएं।

हिमाचल प्रदेश के सुन्दर अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के वैटलैंड (रामरस साइट)

चन्द्रताल वैटलैंड

जिला लाहौल एवं स्पिति में कुंजम दर्रे के समीप 14 हजार फुट से अधिक ऊँचाई पर स्थित यह एक प्राकृतिक जलाशय है। यह वैटलैंड अनेक प्रकार की दुर्लभ वनस्पति एवं जीव प्रजातियों की आश्रय स्थली है। इसी को देखते हुए इस वैटलैंड को अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की रामसर साईट घोषित किया गया है।

पौंगडैम वैटलैंड

जिला काँगड़ा के धौलाधार पर्वत श्रृँखलाओं के तल में स्थित यह वैटलैंड उत्तरी भारत के मानव निर्मित बड़े जलाशयों में से एक है। प्रवासी पक्षियों के लिए यह वैटलैंड स्वर्ग के समान है। 100 से ज्यादा प्रजातियों के लगभग 1.5 लाख प्रवासी पक्षी विश्व के कई स्थानों से प्रति वर्ष शीतकालीन प्रवास हेतु यहां आते हैं।

रेणुका वैटलैंड

जिला सिरमौर में स्थित रेणुका वैटलैंड एक प्राकृतिक वैटलैंड है। एक जैविक सर्वेक्षण के अनुसार यह वैटलैंड 443 वन्य जीव प्रजातियों, 103 पक्षी प्रजातियों तथा 19 मछली प्रजातियों को पोषित करती है और उत्तरी भारत में धार्मिक पर्यटन के लिए भी विख्यात है।

प्रतिवर्ष 2 फरवरी, विश्व वैटलैंड दिवस के रूप में मनाया जाता है। वर्ष 1971 में ईरान के शहर रामसर में विश्व भर के महत्वपूर्ण वैटलैंडों के संरक्षण एवं विकास हेतु आयोजित सम्मेलन में इस दिवस को मनाने का निर्णय लिया गया था।

चीड़ से बिरोजे के निष्कासन की नई छिद्र (बोर होल) विधि

–कुलवंत राय शर्मा और चन्द्र लेखा,
वन उत्पाद विभाग, वानिकी महाविद्यालय, डा. यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन (हि. प्र.)

बिरोजा जिसे लीसा या खल्दा कहते हैं, एक चिपचिपा पदार्थ है जो चीड़ (पाइनस रौक्सबरघाई) के पेड़ों से ज्यादातर निकाला जाता है। हिमाचल प्रदेश में बिरोजा उद्योग चीड़ के वनों पर निर्भर करता है तथा बिरोजा निकालने की कार्यप्रणाली मजदूरों पर निर्भर करती है जिससे ग्रामीणों को रोज़गार भी प्राप्त होता है। आजकल केवल चीड़ से ही बिरोजा निकाला जाता है लेकिन अन्य पाईन प्रजातियों से भी बिरोजा निकाला जा सकता है। चीड़ से बिरोजा निकालने की कार्यप्रणाली प्रयोग के तौर पर उत्तर प्रदेश में 1890 में और व्यवसायिक तौर पर 1896 में शुरू हुई। 1910 में यह पंजाब में और 1940 में हिमाचल और जम्मू कश्मीर में विस्तृत की गई। आजकल अरूणाचल प्रदेश और हरियाणा में भी बिरोजा निकाला जाता है। भारत में इसके जंगल जम्मू–कश्मीर, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड तथा सिक्किम के कई भागों में पाए जाते हैं। चीड़ के पेड़ हिमाचल प्रदेश के निचले तथा मध्य पहाड़ी क्षेत्र जहां का जलवायु गर्म या हल्का गर्म होता है, में समुद्र तल से लगभग 450 से 2300 मी. की ऊंचाई पर पाये जाते हैं। हिमाचल प्रदेश के 12 जिलों में से चीड़ मुख्यतः बिलासपुर, हमीरपुर, मंडी, कांगड़ा, सोलन, सिरमौर और ऊना ज़िलों में पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त चीड़ के वृक्ष चम्बा में डलहौजी तथा कुल्लू में मनीकरण तथा शिमला में भी पाए जाते हैं। बिरोजा एक बहु उपयोगी पदार्थ है, इसके दो मुख्य घटक तारपीन का तेल तथा राल हैं। तारपीन पेंट, वार्निश, फिनायल तथा विभिन्न औषधियों में प्रयोग किया जाता है। राल के भी कई उपयोग है जिनमें तरपाल को वाटर प्रूफ बनाना, पेपर की साइज़िंग ताकि स्याही न फैले, चिविंगम तथा साबुन बनाना इत्यादि प्रमुख है। इसके अतिरिक्त बिरोजे के यह घटक अन्य कई उत्पादों में प्रयोग होते हैं।

बिरोजा पेड़ के उत्तकों में बनता है जो इसे बिरोजा नलियों में भेजते हैं। बिरोजा नलिकायें उत्तकों के एक विशेष समूह से निर्मित होती है। जब कभी भी पेड़ में घाव होता है तो यह नलिकाएं खुल जाती हैं और बिरोजा रिसने लगता है। अभी तक पेड़ के लिए बिरोजे का लाभ पूरी तरह ज्ञात नहीं हो पाया है और ज्यादातर पेडों द्वारा इसका उपयोग घाव भरने के लिए ही सिद्ध हो पाया है। घाव से बिरोजा बहने के बाद इसमें से तारपीन का तेल वातावरण में लगभग सूख जाता है और बाकी बची राल घाव पर एक सख्त खोल बना देती है जो पौधे के अन्दर संक्रमण नहीं होने देता।

भारत में बिरोजे का उत्पादन 1975–76 तक बढ़ता रहा और 1990–91 में 25000 टन से भी कम हो गया और इसकी मात्रा 1995 तक 25000–30000 टन हो गई थी। हिमाचल प्रदेश में वर्ष 1991 में रिल विधि के प्रवेषण से बिरोजे का उत्पादन उल्लेखनीय ढंग से प्रभावित हुआ।

चीड़ से बिरोजा निकालने के लिए कई विधियां विकसित की गई जिसमें से अभी तक केवल दो विधियों, फ्रैंच कप और लिप विधि तथा रिल विधि को व्यापक रूप में अपनाया गया है। रिल विधि से पेड़ पर गहरा घाव होने से बच जाता है और पेड़ का तना कमज़ोर नहीं पड़ता। परन्तु अब कुछ जंगलों से पेड़ों के मरने के समाचार मिल रहे हैं। जो घाव कुछ सालों में भर जाना चाहिए था भर नहीं पा रहा है। कुछ लोग ज्यादा बिरोजा निकालने के लालच में अम्ल की ज्यादा घनता का प्रयोग करते हैं, जिससे कुछ पेड़ों के उत्तक मर जाते हैं तथा घाव नहीं भर पाते और पेड़ सूखने लगते हैं। अतः इस समस्या से छुटकारा पाने के लिये सही अम्ल का प्रयोग करना चाहिए। अम्ल की जगह इथेफोन का प्रयोग भी किया जा सकता है। वर्तमान में बिरोजा निकालने के लिए एक नई छिद्र (बोर होल) विधि पर अनुसंधान कार्य किया गया है, यह विधि अगर सफलापूर्वक प्रयोग में लाई जाए तो बहुत उपयोगी है इसमें बिरोजा निकालने के लिए पेड़ के आधार पर हस्त चलित गिरमिट द्वारा छेद किए जाते हैं। यह विधि पावर ड्रिल की अपेक्षा अधिक कारगर है। इस विधि का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है।

छिद्र विधि : हमने इस नये तरीके पर पिछले कुछ वर्षों से अनुसन्धान कार्य किया है। इसका नाम बोर होल या छिद्र विधि है। इसमें पौधे के मुख्य तने के आधार से लगभग 15–20 सै. मी. ऊपर एक इंच ब्यास तथा 10–15 सै. मी. (4/6 इंच) पेड़ के ब्यास के अनुरूप लम्बा छेद गिरमिट द्वारा किया जाता है। तने के आधार से छिद्र की ऊंचाई

घटाई या बढ़ाई जा सकती है। छेद में इथेफोन (10 प्रतिशत) तथा गन्धक (सल्फ्यूरिक) के अम्ल (20 प्रतिशत) के मिश्रण का छिड़काव, छिड़काव–बोतल द्वारा करते हैं तथा इसके मुख्य द्वार पर एक नलकी (स्पाउट) लगाई जाती है जिसके सिरे पर पॉलिथीन का लिफाफा एक प्लास्टिक की टाई से बांध दिया जाता है। इस प्रक्रिया को संलगित चित्रों में दर्शाया गया है। इस विधि से साफ बिरोजा निकलता है जो शहद की तरह लगता है। इस विधि में घाव भी बहुत छोटा होता है और 2–3 सालों में भर भी जाता है। यद्यपि इस विधि में एक छिद्र से अभी तक बिरोजे की मात्रा कुछ कम मिल रही है परन्तु यह मात्रा यदि प्रति वर्ग सै. मी. घाव के अनुसार ली जाए तो अन्य तरीकों से बेहतर है। बिरोजे की गुणवत्ता और अन्य विशेषताओं को देखते हुए यह तरीका काफी सफल हो सकता है। अभी तक के शोध कार्य में सफलता को देखते हुए यह विधि चीड़ के जंगलों को बिरोजा निष्कासन से होने वाली हानियों से बचाने तथा अच्छी गुणवत्ता का बिरोजा प्राप्त करने के लिए बहुत लाभदायक है तथा रिल तरीके को बदलने में सक्षम भी है। पेड़ की बिरोजा देने की क्षमता के आधार पर एक से अधिक छिद्र किये जा सकते हैं और बिरोजे का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। इतना ही नहीं इस विधि द्वारा निकाले गये बिरोजे की राल और तारपीन उद्योग में शोधन कार्यप्रणाली में बहुत से उकताने वाले कार्य जैसे तारपीन द्वारा घनत्व कम करना, अशुद्धियों को छानना इत्यादि कम हो जाते हैं और अच्छी

गुणवत्ता वाले राल के साथ–साथ बढ़िया और ज्यादा तारपीन तेल का मिलता है। यही नहीं, इससे बनने वाला सामान भी उच्च कोटि का होता है, जिसके परिणाम स्वरूप बाजार में अच्छी कीमत प्राप्त होती है। इतना ही नहीं, आने वाले समय में जब रिल विधि द्वारा टैप किये गये पेड़ों में बिरोजा निकालने के लिए कोई जगह नहीं बचेगी तो यह विधि ही हिमाचल प्रदेश के दो बिरोजा उद्योगों को पूर्ण क्षमता पर चलाने के लिए सहायक होगी। इस विधि द्वारा टैप किये गये पेड़ों में कभी भी ऐसी समस्या नही आयेगी तथा इससे छोटे व्यास वाले पेड़ों से भी उनकी क्षमता के अनुसार बिरोजा निकाला जा सकता है। अतः हमारे अब तक के अध्ययन के अनुसार इस विधि को प्रयोग में लाना अत्यन्त लाभदायक होगा।

जटामांसी–एक अत्ति महत्त्वपूर्ण औषधीय पौधा

– कामिनी एवं डा. आर रैना
वन उत्पाद विभाग, डॉ. यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी–सोलन (हि.प्र.)

वानस्पतिक नाम : नारडोस्टैकिस ग्रैंडिफ्लोरा (*Nardostachys grandiflora*)

कुल : वेलेरनियेसी

यह औषधीय एवं सुगंधित पौधा उत्तरी पश्चिमी हिमालय में 3000 से 5000 मीटर ऊँचाई तक पाया जाता है। भारत में यह कश्मीर, हिमाचल एवं उत्तराखण्ड़ के पर्वतीय क्षेत्रों में पत्थरीली ढलानों पर उगता है। यह एक बहुवर्षीय प्रकंद वाला शाकीय पौधा है। यह पौधा आज अत्ति संकटमयी स्थिति में हैं क्योंकि इसका प्राकृतिक भण्डार एवं संख्या दिन–प्रतिदिन कम होती जा रही है।

यह पौधा एक अति उत्तम हृदय एवं मस्तिष्क बलवर्धक औषधि है। यह शांतिदायक, एवं निद्रा रोगों के लिए उपयोगी पौधा है। इसे खांसी, अपचन, उत्तेजना अवसाद, मिर्गी और उच्च रक्तचाप जैसे रोगों में उपयोग किया जाता है।

इसके प्रकंदो एवं जड़ों को आर्युवैदिक औषधि बनाने के प्रयोग में लाया जाता है। इसके प्रकंदो एवं जड़ों से सुगंधित तेल निकलता है जिसे धूप अगरबती इत्र में एवं बालों को बढ़ाने में उपयोग किया जाता है।

खेती की न्यूनता, अवैज्ञानिक दोहन एवं अत्याधिक व अवैध निर्यात के कारण आज यह पौधा विलुप्त होने की कगार पर है। अतः इसका कृषिकरण अत्यंत जरूरी है जिससे इनका दोहन कम होगा, इनका प्राकृतिक भण्डार बना रहेगा एवं हमारी आमदनी में भी सुधार होगा।

इसकी कृषि के लिए हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र उपयुक्त हैं। इसे चिकनी, रेतीली एवं उपजाऊ मिट्टी में ढलानों पर उगाया जा सकता है। खाद युक्त मिट्टी में यह पौधा अच्छे से पनपता है। इसकी खेती के लिए इसके प्रकंदो की कलमें इस्तेमाल की जाती हैं। उन्हें मिट्टी, रेत एवं खाद की 1:1:1 मात्रा के मिश्रण में उगाया जाता है। कलमें लगाने हेतु जुलाई माह उपयुक्त समय है। इसे कृषि हेतु 20 × 20 से 20 × 30 सें. मी. तक की दूरी पर लगाना चाहिए। यह पौधा 3–4 वर्ष के भीतर प्रकंद निर्यात के लिए तैयार हो जाता है। कलमों को लगाने के बाद एक दिन के अंतराल पर सिंचाई करना अत्यंत आवश्यक है। खरपतवार को भी समय–समय पर निकालना चाहिए।

इस पौधे के प्रकंदो को अक्तूबर के माह में इक्ट्ठा करना चाहिए, क्योंकि इस समय पौधे की पत्तियां सूखने लगती है और इस समय इक्ट्ठे किये प्रकंद गुणवत्ता से भरपूर होते हैं। एक हैक्टेयर भूमि से 670 से 850 किलो प्रकंद प्राप्त किये जा सकते हैं।

इसकी उन्नत फसल प्राप्त करने हेतु सिंचाई, निराई, गुड़ाई एवं जैविक खाद का उपयोग अत्यंत जरूरी है। इसके प्रकंदो का मूल्य बाजार में 1500 रू किलो तक है एवं इसके सुगंधित तेल का मूल्य 12000–30000 रू प्रति किलो तक होता है। इसके प्रकंदो से 1.5 प्रतिशत तेल निकलता है।

डा. यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौणी में किये गये शोध में यह पाया गया है कि इस पौधे में बीज भरपूर मात्रा में नहीं बनता है, केवल 8 से 10 प्रतिशत फूल ही बीज बनाते हैं और 52–72 प्रतिशत बीज अंकुरित होते है। इस कुल से एक अलग तरह का पौधा भी मिलता है जिसकी पत्तियां चौड़ी, छोटी एवं किनारा दांतेदार होता है। इसके पराग में भी विविधता पायी गई है। बीज कम मात्रा में बनने के कारण प्रकंदो की कलमें ही इसकी खेती के लिए उपयुक्त हैं।

अतः इस औषधीय पौधे की खेती को पर्वतीय क्षेत्रों में शुरू करना चाहिए जिससे यह विलुप्त होने से बच सके एवं इससे किसानों को भी एक अतिरिक्त आय का साधन मिलेगा।

वनस्पति वृक्ष वाटिका का महत्व

डॉ. विनीत जिस्टू

हमारे चारों ओर तेजी से हो रहे बदलावों का सर्वाधिक असर हमारी वसुंधरा की ऊपरी सतह पर अधिक महसूस किया जा रहा है। प्राकृतिक वन, कंकरीट के जंगलों में परिवर्तित होते जा रहे हैं। जैव–विविधता से परिपूर्ण वह जंगल जो एक समय शायद पूरी पृथ्वी को ढ़के होंगे और अनेक प्रकार की वनस्पति एवं जीव प्रजातियों की आश्रय स्थली रहे होंगे, शनैः–शनैः समाप्त होते जा रहे हैं। मानव तथा जीव–जंतुओं के लिए आवश्यक पारिस्थितिक प्रणाली को संतुलित रखने में जैव–विविधता, अहम भूमिका निभाती है। मौसम नियंत्रण, शुद्ध हवा एवं पानी की उपलब्धता, ईंधन, रेशे, औषधि, खाद्य सुरक्षा तथा प्राकृतिक आपदा से सुरक्षा आदि में भी जैवविविधता का महत्वपूर्ण योगदान है। लेकिन इन सेवाओं की न तो सही पहचान की जाती है और न ही उनका आर्थिक एवं सामाजिक रूप से सही आकलन होता है। यह अनुमान लगाना कठिन है कि शेष बची जैव–विविधता का भविष्य क्या होगा जो नियमित रूप से हमारे सामने–सामने नष्ट होती चली जा रही है। जैव–विविधता के ह्रास के सीधे मायने है, मानव सभ्यता का विनाश।

स्वस्थ पारिस्थितिक प्रणाली का होना, पहाड़ी जीवन–शैली के लिए विशेषकर महत्वपूर्ण है क्योंकि यहां पर अधिकतर लोग जीवन यापन हेतु प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहते हैं। विश्व के अनेक भागों में अनेक प्रकार की प्राकृतिक प्रणालियां, जिन पर लोगों की आजीविका, जीवन–यापन तथा आर्थिकी निर्भर होती है आज, नष्ट होने के कगार पर है। यद्यपि प्राकृतिक प्रणाली के असंतुलित होने का कुप्रभाव सभी पर पड़ता है तथापि गरीब इससे अधिक प्रभावित होता है। यह हमारी सोच तथा नीतियों पर निर्भर है कि हम अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए किस प्रकार का पर्यावरण तैयार करते हैं।

जैवविविधता संरक्षण मूलतः दो विधियों द्वारा किया जा सकता है। पहली विधि, इनसीटू अर्थात स्वस्थाने संरक्षण की है और दूसरी, एक्स–सीटू संरक्षण, अर्थात अन्य–स्थाने संरक्षण। इन सीटू संरक्षण वह प्रक्रिया है, जिसमें किसी स्थान की संकटग्रस्त वनस्पति एवं जीव प्रजातियों का उसी स्थान पर संरक्षण किया जाता है। इसके लिए चाहे कुछ प्रजातियों को शिकार व सफाई आदि के माध्यम से नियंत्रित कर अनुवांशिक विविधता की आवश्यकताओं के अनुरूप क्यों न करना पड़े। जैव–विविधता की एक्स–सीटू संरक्षण विधि के तहत, किसी संकटग्रस्त वनस्पति एवं जीव प्रजाति का संरक्षण इन प्रजातियों के कुछ भाग को वहां से निकाल कर किसी अन्य उपयुक्त स्थान पर ले जा कर विकसित किया जाता है। यह जैव–विविधता संरक्षण की अभी तक ज्ञात सर्वाधिक प्रचलित एवं कठिन विधि है। क्योंकि किसी भी प्रजाति को नए स्थान पर ले जा कर उसके लिए पहले जैसा अनुकूल वातावरण तैयार करना वास्तव में कठिन एवं चुनौतिपूर्ण कार्य होता है।

वनस्पति वाटिका एक्ससीटू/अन्यस्थाने संरक्षण की एक अनुकूल विधि है। वनस्पति वाटिकाओं के माध्यम से विभिन्न मौसमों तथा स्थानों की वृक्ष प्रजातियों, झाड़ियों तथा काष्ठीय बेलों आदि का संग्रह किया जाता है। इन वाटिकाओं के द्वारा जहां एक ओर जनन– द्रव्य एकत्र किया जाता है वहीं इनसे उद्यान सम्बन्धी अध्ययन आदि में भी सहायता मिलती है। वनस्पति वाटिकाओं के द्वारा दुर्लभ प्रजातियों का अन्य स्थान पर संरक्षण तथा इनका व्यापक स्तर पर प्रजनन जैसे उद्देश्यों की पूर्ति भी होती है। यह विधि इन सीटू/स्वस्थान संरक्षण की पूरक है। सुव्यवस्थित व सौंदर्यपूर्वक तैयार की गई वनस्पति वाटिकाएं शैक्षणिक महत्व ही नहीं अपितु जागरूकता पैदा करने में भी अहम भूमिका निभाती हैं।

परिभाषा के अनुसार वृक्ष वाटिका, वृक्षों, झाड़ियों तथा अन्य वृक्षीय पौधों का बाह्य संग्रह है जिसमें पौधे

योजनाबद्ध तथा सौन्दर्यपूर्वक प्रदर्शन हेतु क्रमबद्ध किए जाते हैं। यह एक जीवित संग्रहालय होता है, जहा आगंतुक पूरे वर्ष भ्रमण, मनोरंजन तथा वनस्पति आदि के विषय में ज्ञानवर्धन हेतु आते है। हिमाचल प्रदेश की राजधानी शिमला से लगभग 7 कि.मी. की दूरी पर समरहिल के समीप पौटरहिल नामक स्थान पर वन विभाग द्वारा स्थापित वन विहार इसी का एक उदाहरण है। यह संतोष की बात है कि समुद्रतल से 1750 से 2250 मी. की ऊंचाई तथा 100 हैक्टेयर से अधिक क्षेत्र में फैला वन क्षेत्र, शहरीकरण की मार के बावजूद, आज भी शीतोष्ण वनस्पति तथा जीव–जंतुओं विशेषकर, तितलियों का असाधारण रूप से संचय किए हुए है।

भारतवर्ष में इस समय विभिन्न आकार की लगभग 35 वनस्पति वाटिकाएं हैं। इन वाटिकाओं में अनेक प्रकार की वनस्पति भिन्न–भिन्न संख्या में मौजूद है। यह वाटिकाएं अधिकतर उष्णकटिबन्धीय तथा अर्द्ध उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों में स्थित है। पश्चिमी तथा उत्तर पश्चिम हिमालय क्षेत्र में एक्ससीटू सुविधाएं उतनी मात्रा में उपलब्ध नहीं है जितनी होनी चाहिए। वन विभाग हिमाचल प्रदेश के वन्यप्राणी प्रभाग द्वारा हिमालयन वन अनुसंधान केंद्र के सहयोग से तैयार की गई एक परियोजना के तहत पौटरहिल की वनस्पति वाटिका में स्थानीय तथा अन्य स्थान की संकटापन्न वनस्पति के संरक्षण एवं विकास पर कार्य किया जा रहा है। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य जीनपूल संरक्षण है। आज प्रदेश में अनेक विकासात्मक गतिविधियां तथा पनविद्युत परियोजनाएं कार्यान्वित की जा रही है, जिसके परिणामस्वरूप प्रभावित प्रजातियों के पुनर्वास में यह वाटिका अहम भूमिका निभा सकती है।

पौटर्ज़ हिल वन विहार प्रकृति पर्यटन के लिए तो पहले से ही प्रसिद्ध है, लेकिन अब यह पश्चिमी हिमालयी शीतोष्ण वृक्ष प्रजाति की वनस्पति के लिए जीवित भण्डार के रूप में भी परिवर्तित हो जाएगा। यह वनस्पति वाटिका इस क्षेत्र की दुर्लभ तथा संकटापन्न वृक्ष प्रजातियों के संरक्षण में सहायक होगी। यहां पर सदाबहार शीतोष्ण शंकुधारी वन जैसे देवदार, कायल व चीड़ आदि तथा विभिन्न प्रकार के चौड़ी पत्ती, बान, बुरांस, खनोर, चिनार व फलदार वृक्ष कैंथ व नाशपाती के साथ–साथ झाड़ियां व घास के मैदान भी उपलब्ध हैं। वन विहार स्थित वृक्ष वाटिका से शोध, शिक्षा व पर्यावरण के प्रति जागरूकता व प्रकृति पर्यटन आदि को बढ़ावा तो मिलेगा ही साथ ही समाज तथा जैवविविधता के मध्य परस्पर संवाद भी स्थापित हो पाएगा। इस प्रकार की वाटिकाएं विशेष महत्व रखती हैं क्योंकि यह नाजुक पर्यावरण क्षेत्र में वैश्विक संरक्षण के केन्द्रबिन्दु बन गई हैं। हिमाचल प्रदेश वन विभाग द्वारा पौटर हिल में वृक्ष वाटिका स्थापित कर उत्तर पश्चिम हिमालय क्षेत्र की बहुमूल्य प्रजातियों के संरक्षण की दिशा में एक प्रयास किया गया है। इस वृक्ष वाटिका में प्रस्तुत वृक्ष प्रजातियां पर्यावरणीय दृष्टि से ही नहीं अपितु आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है क्योंकि ये इमारती लकड़ी, जंगली फल, गिरि, मसाले, रेशे, औषधि तथा सौंदर्य प्रसाधन प्रदायक भी हैं। आशा की जाती है कि वाटिका के रूप में वृक्ष प्रजाति का यह अद्वितीय भण्डारण लोगों, विशेषकर युवाओं को हमारी राष्ट्रीय धरोहर "शीतोष्ण हिमालय की जैविक विविधता" के संरक्षण बारे जागरूक करने में सहायक होगा।

चिरायता उपयोगिता तथा कृषिकरण

—बन्दना, पैन्सी, आर. रैना व यशपाल शर्मा
वन उत्पाद विभाग डॉ. यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी–सोलन (हि.प्र.)

वानस्पतिक नाम : स्वरशिया चिरायता (*Swertia chirayita*)
कुल : जेनशिनेसी

भूमिका : चिरायता भारत में उपयोग की जाने वाली एक प्रमुख आयुर्वेदिक औषधि है। चिरायता को औषधीय उपयोग के कारण भारत में पाये जाने वाले अपनी जाति के अन्य पौधों में सर्वश्रेष्ठ माना गया है। अवैध दोहन के कारण आज यह पौधा विलुप्त होने की कगार पर है और इसी कारण इसे विलुप्त पौधों की श्रेणी में शामिल किया गया है।

यह वास्तविक रूप में हिमालय क्षेत्र का स्थानीय पौधा है जो कि मुख्य रूप से शीतोष्ण हिमालय में कश्मीर से लेकर भूटान तक और उत्तरपूर्वी भारत में मेघालय व खासी की पहाड़ियों पर पाया जाता है। यह समुद्र तल से 1200 से 3000 मीटर तक की ऊँचाई पर पाया जाता है। हिमाचल में यह धौलाधार, लुवाई के जंगलों में मण्डी, कुल्लू–मनाली और रोहडू में पाया जाता है। अत्याधिक दोहन के कारण इसे इसकी प्राकृतिक जगहों में खोजना मुश्किल हो गया है। यह देवदार, फर, रईतोष, बान आदि के जंगलो में पाया जाता है। मुख्यतः ये देवदार, रईतोष की शाखाओं के नीचे उगता है।

उपयोग : पूरा पौधा ही चखने में अत्याधिक कड़वा होता है और अपनी इसी गुणवत्ता के कारण ये बहुत सी बीमारियों के इलाज में उपयोग होता है। ज्यादातर ये चर्म रोगों, पाचन क्रिया को सुधारने में, आंत के कीड़े निकालने में और दस्त में उपयोग होता है। यह रक्तशोधक भी है। यह हृदय, पेट, जिगर और आँखों के लिए स्वास्थ्य वर्धक होता हैं। अपने अत्याधिक उपयोगों के कारण इसकी मांग दिन प्रतिदिन औषधीय उद्योगों में बढ़ती जा रही है। बढ़ती मांग के कारण प्राकृतिक क्षेत्रों से इसका दोहन हो रहा है। साथ ही साथ सीमित कृषिकरण ने इसे विलुप्त पौधों की सूची में शामिल कर दिया है।

सारा पौधा ही उपयोगी होता है परन्तु पत्तों, जड़ों और तने को उपयोग के लिए ज्यादा प्राथमिकता दी जाती है। इस पौधे के उपयोग का वर्णन आयुर्वेदा और बहुत से औषधीय शास्त्रों में किया गया है। बहुत सी औषधीय दवाईयां जैसे कि आयुष–64, रक्तशोध्क शरबत, बलवर्धक शरबत और मरहम क्रीम इससे बनाए जाते हैं।

पौधे की जानकारी : पौधे का जीवन दो साल से ज्यादा होता है और तीसरे साल में फूल–फल और बीज की उत्पत्ति होती है। 2 साल की वृद्धि के बाद पौधे की ऊँचाई 150–160 सैं. मी. तक होती है। तना नीचे से गोल और ऊपरी भाग से चर्तुभुजीय आकार का होता है। पत्ते ऊपरी सतह से हरे रंग के और निचली सतह से बैंगनी रंग के होते हैं। तना भी हरे और बैंगनी रंग के मिश्रण से बना होता है। जड़ें नुकीली, छोटी, दृढ़ 7 सैं. मी. तक लम्बी और आधे इंच तक मोटी होती हैं फूल छोटे आकार के, हरे और पीले रंग के मिश्रण और बैंगनी धब्बों के मेल से बने होते हैं। फल बहुत ही छोटे आकार का होता है जोकि ऊपरी किनारे से दो भागों में विभाजित होता है। बीज सूक्ष्म कोणीय और अण्डाकार होते हैं।

चिरायता की खेती : प्राकृतिक रूप से पौधा बीज द्वारा ही उगता है जब बीज पूरी तरह नवम्बर–दिसम्बर में पक जाता है। बीज एक वर्ष के भीतर ही बोने चाहिए क्योंकि

उसके बाद बीज की उपजाऊ क्षमता कम हो जाती है। बीज बोने के लिए मार्च–अप्रैल का समय उपयुक्त रहता है। ताजा बीजों की 90 प्रतिशत तक उपजाऊ क्षमता होती है। चिरायता की खेती के लिए पहले नर्सरी में पौध तैयार की जाती है। बीज नमीयुक्त और उपजाऊ नर्सरी में लगाने चाहिए। बोए हुए बीज एक पतली मिट्टी की परत से ढकने चाहिए। बीज बोने के बाद क्यारियों को गली–सड़ी घास से ढकना चाहिए। नर्सरी में मिट्टी की नमी बनाए रखने के लिए निरन्तर सिंचाई करनी चाहिए। जैसे ही बीज अंकुरण शुरू हो वैसे ही गली–सड़ी घास क्यारियों से हटा देनी चाहिए। जब नये अंकुरित पौधे 6–8 सैं. मी. तक की ऊँचाई प्राप्त कर लें तो वो खेत में प्रत्यारोपण के लिए तैयार होते हैं। चिरायता के पौधे को 20–30 सैं. मी. के फासले पर लाइनों में लगाना चाहिए। खेत की तैयारी के समय सड़ी–गली गोबर की खाद या कम्पोस्ट प्रति हैक्टेयर के हिसाब से डालकर मिट्टी में अच्छी तरह मिलानी चाहिए।

पौधा मुख्य रूप से अमलीय मृदा में उगता है जिसमें कार्बन की मात्रा अधिक हो।

निराई–गुड़ाई और सिंचाई : इसकी खेती के लिए उपजाऊ, रेतीली–चिकनी मिट्टी की आवश्यकता होती है। शुरू में फसल को खरपतवारों से साफ रखने के लिए 10–12 दिन के अन्तराल पर 2–3 निराई और पौधे के आस–पास जड़ों पर मिट्टी चढ़ानी चाहिए।

शुरू में पौधे के जड़ पकड़ने तक हर रोज फौवारे से सिंचाई करनी चाहिए। बाद में एक सप्ताह के अन्तराल पर वर्षा ऋतु शुरू होने के बाद सिंचाई कम करनी चाहिए।

पौधे की तुड़ाई : पौधा औषधीय उपयोग के लिए जुलाई–सितम्बर में तोड़ा जाता है, जब ये फूलों से भरपूर होता है। पूरा पौधा ही औषधीय माना गया है पर जड़ें ज्यादा उपयोगी मानी गयी हैं।

आगामी आवश्यकता : पूरा पौधा ही व्यापार में उपयोग होता है। नवम्बर–दिसम्बर के महीने में इसका व्यापार होता है। बढ़ती कीमत और ज्यादा मांग के कारण संग्रहकर्ता और स्थानीय लोग इसे पकने से पहले ही इक्कट्ठा कर लेते हैं जिससे बीज तैयार नहीं हो पाता। अवैध और अत्याधिक दोहन से चिरायता इसके प्राकृतिक क्षेत्रों में लुप्त होता जा रहा है। भारत में प्रतिवर्ष 600–700 टन चिरायता आयात किया जाता है। बढ़ती मांग, अत्याधिक दोहन और संरक्षण के कारण इसके कृषिकरण या खेती की जरूरत है जिससे की औषधीय उद्योगों की मांग भी पूरी की जा सके। डॉ. यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय में इसकी खेती तथा सुधार का काम किया जा रहा है तथा यहां से इसके पौध किसानों को प्राप्त हो सकती है।

मा वो रिषत्खनिता यस्मै चाहं खनामि वः।
द्विपच्चतुष्पदस्मांक सर्वमस्त्वनातरम्।।

–ऋग्वेद

हे औषधियो! मैं तुम्हें खोदकर निकालता हूं,
तुम मुझे हिंसक मत होने देना।
मैं तुम्हें जिस रोगी के लिए ग्रहण कर रहा हूं
वह रोगी भी नाश को प्राप्त न हो।
हमारे मनुष्य और पशु सभी स्वस्थ रहें।

नन्ही गौरैया : एक दृष्यावलोकन

– **सतपाल धीमान**, हि.प्र.व.से.

प्रतिदिन पौ फटते ही आपके घरों के आस–पास होने वाली पक्षियों की चहचहाट से शायद आपकी आंख खुलती होगी। आपके घरों के आस–पास पाए जाने वाले अनेक प्रकार के पक्षियों में से सामान्यतः अधिक दिखाई देने वाली एक नन्ही चिड़िया को अनेक नामों से जाना जाता है। अंग्रेजी में इसे स्पैरो, हिन्दी में गोरैया, घरेलू चिड़िया तथा पहाड़ी भाषा में इस चिड़िया को चिड़ू या चड़कू भी कहा जाता है। भारतीय उप महाद्वीप में इस चिड़िया की 6 प्रजातियां विद्यमान हैं। इसकी अन्य प्रजातियां डैड–सी स्पैरो तथा इयूरेशियन रसैट स्पैरो आदि कहलाती हैं। लेकिन, हमारे घरों के आस–पास पाई जाने वाली आम घरेलू चिड़िया सर्वाधिक संख्या में लगभग सभी जगह पाई जाती हैं। क्या कभी अपने इस नन्हे जीव की व्यथा पर विचार किया है? आपको यह जानकर अचरज होगा कि आज इनमें से अधिकतर प्रजातियां अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही हैं। ऐसा माना जाता है कि मानवीय क्रियाकलाप अनेक प्रजातियों के लुप्त होने के लिए जिम्मेदार है। 17वीं शताब्दी में मारिशस के द्वीपों से डोडो नामक पक्षी का लुप्त होना इसका जीता–जागता उदाहरण है।

घरेलू चिड़िया और मानव का अंतरंग सम्बंध रहा है। सदियों से इस पक्षी ने हमारे घरेलू वातावरण में अपने लिए आशियाना तलाश रखा है। किसी भी जीव के जीवित रहने के लिए सुरक्षित आश्रय तथा खाने की उपलब्धता, मूलभूत आवश्यकता होती है। शायद इसीलिए यह चिड़िया बड़ी चतुराई से हमारे परम्परागत घरों की छतों के छिद्रों आदि में अपना घोंसला बना लेती हैं और उनमें अपने बच्चों का पालन–पोषण करती हैं। यह स्थान इन्हें व इनके बच्चों को कौवों, मैना, बाज तथा अन्य परजीवियों के खतरों से सुरक्षा प्रदान करने मे सहायक होता है। इसके अलावा घरों के आसपास या पिछवाड़े पाई जाने वाली अनेक प्रकार की छोटी झाड़ियां व पेड़–पौधे इनके बच्चों के लिए खाना व आश्रय प्रदान करते हैं। घरों के आसपास इन्हें खाने के लिए मानव द्वारा छोड़े गए अनाज के दाने आदि भी मिल जाते हैं, जो इनके जीवन यापन हेतु पर्याप्त होते हैं।

लेकिन ऐसा पता चला है कि इन पक्षियों की संख्या निरंतर कम होती जा रही है। हैरानी की बात है कि अनेक इलाकों से यह पक्षी शनैः–शनैः कम या गायब होने लगे हैं जहां पहले ये बहुतायत में पाए जाते थे। इन पक्षियों की आबादी वाले इलाकों में निरंतर घटती संख्या के सम्बन्ध में अनुसंधान जारी हैं और अभी यह निश्चित तौर पर नहीं कहा जा सकता कि इसके क्या कारण हैं।

यह सर्वविदित है कि हमारे भवन निर्माण व खानपान के पराम्परागत तौर–तरीकों में भारी बदलाव आया है। हमारी लगतार बढ़ती आबादी व बदलती जीवनशैली का प्रभाव इन पक्षियों की घटती संख्या के लिए एक कारक

माना जा सकता है। कंकरीट के नए भवनों में अकसर घरेलू चिड़ियों को घोंसला बनाने व छिपने के लिए छिद्र या स्थान नहीं मिल पाते। घरों के आसपास के आंगन दिनों–दिन गायब होते जा रहे हैं। घरों के आस–पास की स्थानीय झाड़ियां, वृक्ष व अन्य वनस्पति या तो समाप्त हो रही हैं या फिर उनका स्थान बाहर से लाई गई प्रजातियां ले रही हैं। फूलदानों में भी स्थानीय की जगह, बाहरी फूल दिखाई देते हैं जिसका सीधा असर इन पक्षियों की संख्या पर देखा जा सकता है। इन बदलती परिस्थितियों में यह नन्ही चिड़िया स्वयं को ढाल नहीं पा रही है और इन पक्षियों की संख्या लगातार कम होती चली जा रही है। स्थिति इतनी विकराल

हो चली है कि इन पक्षियों के प्रति जन–चेतना उत्पन्न करने की दृष्टि से हमें प्रतिवर्ष विश्व स्पैरो दिवस मनाना पड़ रहा है।

अब समय आ गया है जब हमें इस नन्हे प्राणी की संख्या कम होने वाले कारकों की पहचान कर उनसे प्रभावी रूप से निपटना होगा। यदि इस चिड़िया के प्रजनन हेतु प्राकृतिक स्थान की उपलब्धता में कमी है या उन्हें खाने की कमी महसूस हो रही है तो उनके लिए वैकल्पिक व्यवस्था की जानी चाहिए, जिसके लिए नए तौर–तरीके अपनाए जाने की ओर विशेष ध्यान देना होगा। इसके अलावा इन पक्षियों की समय–समय पर गणना कर इन पर लगातार नज़र बनाए रखनी होगी।

आजकल मोबाइल टावरों का बेतरतीबी से लगाया जाना तथा उनसे उत्पन्न होने वाली तरंगों के प्रदूषण को भी इन पक्षियों की संख्या में कमी का एक कारण माना जा रहा है। लेकिन इस कथन का वैज्ञानिक आधार सुनिश्चित किया जाना अभी बाकी है। इस दिशा में शोध किया जाना चाहिए कि टावरों से उत्पन्न विकिरण का प्राणियों, विशेषकर इस नन्ही चिड़िया पर क्या प्रभाव पड़ता है?
इतना सबकुछ होने के बावजूद भी अभी स्थिति इतनी भयावह नहीं हुई है। आज भी अर्धविकसित शहरों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में यह नन्ही चिड़िया भरपूर संख्या में देखी जा सकती है। निसंदेह, शहरों में इनकी संख्या लगातार गिरती जा रही है।

मैंने, पिछले डेढ वर्षों से भी अधिक समय से शिमला शहर में इस पक्षी की संख्या को करीब से जानने का प्रयत्न किया है। टालैण्ड से हिमलैण्ड, कमला नहरू अस्पताल, माल रोड़ तथा कालीबाड़ी मंदिर तक के लगभग चार किलोमीटर दूरी वाले क्षेत्र में इस प्रजाति के 325–350 पक्षी 6–7 के झुण्डों मे पाए गए। गर्मियों में प्रातः 6 बजे से 7. 30 बजे तक इन पक्षियों के झुण्डों को सड़कों के किनारे तथा खाने की दुकानों के बाहर दाना चुगते आसानी से देखा जा सकता है। घरों के आस–पास की झाड़ियों में तो इनके झुण्डों के झुण्ड चहचहाते देखे जा सकते हैं। हम किसी भी कीमत पर इस नन्हे पक्षी को समाप्त नहीं होने देना चाहेंगे। आज भी बुजुर्गों को इन पक्षियों के लिए दाना डालते देखा जा सकता है। हमारी सहअस्तित्व की परम्पराओं के अनुरूप हम इस सुन्दर पक्षी के संरक्षण, विकास तथा पुनर्वास हेतु काफी कुछ कर सकते हैं।

आज से ही हम अपने घरों के आस–पास इस पक्षी को करीब से देखने का प्रयत्न करें। यह आकलन करें कि कितने पक्षी कहां–कहां उपलब्ध हैं। इनकी गणना करने का प्रयत्न करें, कम–से–कम माह में एक बार। इसकी गणना के आंकड़े अपने पास संग्रहित करें। आपके घरों की छतों आदि के कोनों पर बने छिद्र, इन पक्षियों के लिए अच्छे आवास होते हैं। आप अपने घरों के आस–पास इन पक्षियों के लिए परभक्षी निरोधी घोंसले बनवा कर भी टंगवा सकते हैं, शायद यह पक्षी आपके द्वारा बनाए गए इस कृत्रिम आवास को ही अपना लें। इसके अतिरिक्त आप पक्षियों के लिए बाजरा आदि जैसे खाना डालने के लिए भी सुरक्षित स्थान बना सकते हैं। आप घरों के आस–पास खाली स्थानों में स्थानीय प्रजाती की अधिक से अधिक झाड़ियां लगाएं । यदि इन पक्षियों की कम होती संख्या आपके ध्यान में आती है तो एक जागरूक नागरिक होने के नाते आप इसकी जानकारी निकटतम वन या वन्यप्राणी कार्यालय तक अवश्य पहुंचाएं ताकि अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही इस नन्ही चिड़िया की रक्षा की जा सके।

गौरैया

क्या आप जानते हैं...?

- 20 मार्च विश्व गौरैया दिवस के रूप में मनाया जाता है
- गौरैया का वैज्ञानिक नाम *Passer domesticus* है
- गौरैया विश्व के अधिकतर भागों में पाया जाने वाला पक्षी
- गौरैया दिल्ली का राज्य पक्षी घोषित किया गया है
- उत्तर भारत की संस्कृति में यह चिड़िया इस तरह रची बसी है कि प्रसिद्ध लेखिका महादेवी वर्मा ने कहानी गौरैया में कामना की है कि हमारे शहरी जीवन को समृद्ध करने के लिए गौरैया चिड़िया फिर लौटेगी

ग्रेट हिमालयन राष्ट्रीय उद्यानः सामुदायिक विकास एवं संरक्षण

संदीप शर्मा, हि.प्र.व.से.

ग्रेट हिमालयन राष्ट्रीय उद्यान को पश्चिम हिमालय क्षेत्र का रत्न कहा जाता है क्योंकि यह उद्यान इस क्षेत्र की वनस्पति एवं वन्यजीव संपदा का प्रतिनिधित्व करता है। 754 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैले इस राष्ट्रीय उद्यान के पश्चिमी किनारे पर 265.6 वर्ग कि.मी. का ईकोजोन बनाया गया है जो इस उद्यान के बफरज़ोन के रूप में कार्य करता है। इस राष्ट्रीय उद्यान की स्थापना वर्ष 1999 में की गई थी और सामुदायिक विकास की दिशा में इसने तभी से अनेकों मील के पत्थर स्थापित किए हैं। ग्रेट हिमालय राष्ट्रीय उद्यान उन स्थलों में से एक है जिनका प्रबन्धन भागीदारी के सिद्धांतों के अनुरूप किया जा रहा है।

वर्ष 1999 में जब इस उद्यान की स्थापना की घोषणा की गई थी तो आसपास की आबादी बहुत खुश नहीं थी। हालांकि इस क्षेत्र पर उनके अधिकारों व यहां से उन्हें मिलने वाले लाभों के एवज में उन्हें मुआवजा भी प्रदान किया गया था। स्थानीय लोगों की चिंताओं का निराकरण करने के लिए एक अलग सोच विकसित करने की आवश्यकता थी। इसके लिए उद्यान प्रबन्धन द्वारा स्थानीय लोगों से लगातार संवाद बनाए रखते हुए ईकोज़ोन की आबादी को संगठित करने का महत्वपूर्ण कदम उठाया गया। शनैः–शनैः स्थानीय लोगों के इस समूह ने एक गैर–सरकारी संस्था का रूप धारण किया जो सहारा नाम से विख्यात हुई। तत्पश्चात वर्ष 2008 में इसका पुनः नामकरण किया गया जिसे अब बी. टी.सी.ए. अर्थात बायो डाईवर्सिटी टूरिज्म एंड कम्यूनिटी एडवांसमैंट नाम से जाना जाता है। उद्यान के ईकोज़ोन क्षेत्र के सभी ग्रामवासियों को इस संस्था की आमसभा का सदस्य बनाया गया है। आमसभा द्वारा गवर्निंग बॉडी का चयन किया जाता है जिसकी देख–रेख में इस गैर–सरकारी संगठन द्वारा कार्य किए जाते हैं। इतना ही नहीं, यहां की सभी महिलाओं को संगठित कर उनके स्वयं सहायता समूह बनाए गए हैं। सभी स्वयं सहायता समूहों की कार्यप्रणाली एक सी है। आज यहां ऐसे 57 स्वयं सहायता समूह विद्यमान हैं, जिनके द्वारा वर्मीकंपोस्ट, बुनाई, जैम, अचार तथा बुरांश जूस आदि पदार्थ तैयार किए जा रहे हैं। इन स्वयं सहायता समूहों को संगठित करने हेतु ग्रुप आर्गेनाइजर लगाए गए हैं जो विशेष प्रणाली द्वारा इन समूहों को संगठित करते हैं। इन ग्रुप आर्गेनाईजरों अर्थात समूह आयोजकों, को जैव विविधता सोसाईटी के माध्यम से मासिक मानदेय का भुगमान किया जाता है। इस प्रक्रिया में पार्क प्रबन्धन सुविधाकर्ता की भूमिका निभाता है। उद्यान प्रबन्धन द्वारा समय–समय पर इन समूहों के लिए व्यवसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है ताकि उन्हें कार्य में दक्षता प्राप्त हो सके।

एक ग्रुप आर्गेनाईजर 10–12 स्वयं सहायता समूहों का प्रबन्धन करता है। इन समूहों को विमेन सेविंग एंड क्रैडिट ग्रुप अर्थात डब्लयू.एस.सी.जी. कहा जाता है। इन डब्लयू.एस.सी.जी. द्वारा तैयार माल बी.टी.सी.ए. अर्थात बायो डाईवर्सिटी टूरिज्म एंड कम्यूनिटी एडवांसमैंट के कार्यकारी सदस्यों द्वारा एकत्र कर मनाली, औट तथा साईरोपा स्थित विक्रयकेंद्रों के माध्यम से बेचा जाता है। इन विक्रयकेंद्रों का निर्माण उद्यान प्रबन्धन द्वारा किया जाता है। विमेन सेविंग एंड क्रैडिट ग्रुप की सबसे अच्छी बात यह है कि इनके द्वारा 2 रूपए प्रतिदिन के हिसाब से बचत कर उसे सामूहिक खाते में जमा करवाया जाता है। यह सामूहिक खाता एक लोन बैंक का काम भी करता है जहां से आवश्यकता पड़ने पर कोई भी सदस्य पहले से तय ब्याज दर पर लोन प्राप्त कर सकता है। अभी तक इस सामूहिक खाते में 11 लाख रू0 से अधिक की धनराशी जमा हो चुकी है और सदस्य अपनी छुटपुट आवश्यकताओं के लिए इस लघु वाणिज्यिक संस्था से धन प्राप्त कर सकते हैं।

इस उद्यान के ईकोज़ोन के पुरूषों का एक सैल गठित किया गया है जिसे इस क्षेत्र में ईकोटूरिज्म गतिविधियां संचालित करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया है। इस सैल के सदस्य आगन्तुकों के लिए मार्गदर्शक, माल ढुलाई, खानसामा तथा अन्य मूल–भूत सुविधाएं जुटाने का कार्य करते हैं। सैल के सभी सदस्य बी.टी.सी.ए. द्वारा पंजीकृत हैं तथा उन्हें पहचान पत्र जारी किए गए हैं। उद्यान प्रबन्धन द्वारा इन सदस्यों को पहचान पत्र दिखाने पर उद्यान में निशुल्क प्रवेश की अनुमती प्रदान की जाती है। इस प्रकार स्थानीय पुरूष इस क्षेत्र की परम्पराओं, वनस्पति तथा

वन्यजीव से सम्बन्धित उनके पास अर्जित पारम्परिक ज्ञान के बलबूते पर अच्छी कमाई कर लेते हैं। यह लोग उद्यान के लिए भी आंख और कान का काम करते हैं।

इस उद्यान बारे वर्ष 1984 में जारी अधिसूचना के उपरान्त यहां अनेक बदलाव आए हैं। स्थानीय समुदाय को इस प्रयास में सम्मिलित करने की प्रक्रिया इतनी आसान नहीं थी। आखिर दृढता रंग लाई। इस प्रक्रिया की जड़ें अब स्थापित हो चुकी हैं और विषम परिस्थितियों का सामना करने में सक्षम हो चुकी हैं। अन्य कई संस्थाओं की भांति इस संस्था को भी आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ा। मूलरूप से सहारा के नाम से आरम्भ की गई इस गैर–सरकारी संस्था को वर्ष 2008 में बी.टी.सी.ए. में परिवर्तित कर दिया गया। सदस्यों को अनिश्चितता की परिस्थितियों से गुज़रना पड़ा। लेकिन यह संस्था आज भी कार्य कर रही है। सब कुछ सही चल रहा है लेकिन सुधार की गुंजाइश तो हमेशा ही रहती है। उद्यान प्रबन्धन द्वारा कुछ क्षेत्रों की पहचान की गई है जिन पर ईमानदारी से प्रयास किए जाने आवश्यक हैं। समर्पण की भावना से ही इन कमियों को दूर किया जा सकता है। समय की मांग है कि बी.टी.सी.ए. के कार्यकारी सदस्यों के लिए किसी प्रकार के प्रोत्साहन का प्रावधान हो। प्रोत्साहन के प्रावधान से न केवल कार्यकारी सदस्यों में कार्य के प्रति एक नई शक्ति का संचार होगा अपितु उनमें अपनत्व की भावना भी जागृत होगी और संगठन सतत आत्मनिर्भता की ओर अग्रसर होगा। इसी प्रकार स्वयं सहायता समूहों द्वारा तैयार किए गए उत्पादों की गुणवत्ता पर नियंत्रण, विपणन व्यवस्था, रणनीति, विज्ञापन तथा उत्पादों का आकर्षक रूप में प्रस्तुतिकरण आदि जैसे कुछ अन्य क्षेत्र हैं, जिन पर गम्भीरता से विचार होना आवश्यक है।

ईको विकास कार्य समय और स्थान की मांग के अनुरूप किए जाते हैं इसलिए सभी स्थानों के लिए कोई सामान्य मानक स्थापित नहीं किया जा सकता। प्रस्तुत लेख एक अध्ययन है, जिससे सम्भवतः अन्यों के लिए प्रारम्भिक जानकारी उपलब्ध हो सकेगी।

ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क को युनेस्को की विश्व धरोहर सूची में लाने के प्रयास तेज

ग्रेट हिमालयन नैशनल पार्क पश्चिमी हिमालय पर्वतीय श्रृंखला में विश्व भर में असाधारण प्राकृतिक सुंदरता, जैव–विविधता, दुर्लभ एवं विलुप्त हाने वाली वन्य प्राणी एवं पेड़–पौधों की प्रजातियों के लिए प्रसिद्ध हैं। इस पार्क में पश्चिमी हिमालयी चौड़ी पत्ती व शंकुधारी वन एवं धरातल वनस्पति बरकरार है जो कई दुर्लभ वन्य प्राणियों एवं पक्षियों के निरंतर अस्तित्व के लिए आवश्यक आवास स्थल प्रदान करते हैं। यह पार्क वैज्ञानिकों एवं पर्यटकों को पश्चिमी हिमालय पर्वतीय पारिस्थितिक प्रणालियों की पूरी श्रृंखला के अध्ययन तथा मनोरंजन का अद्‌भुत मौका प्रदान करता है। हिमाचल प्रदेश वन विभाग इस पार्क की पारिस्थितिक अखंडता बनाए रखने एवं संरक्षण हेतु कानूनी, प्रशासनिक, तकनीकी तथा वैज्ञानिक उपाय सुदृढ़ता से लागू करने हेतु वचनबद्ध है। विभाग द्वारा ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क को यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में लाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

ग्रीन इण्डिया मिशन

ई. विक्रम, भा.व.से.

ग्रीन ईंडिया मिशन भारत सरकार का एक प्रतिष्ठित कार्यक्रम है जिसे प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन के क्षेत्र में हो रही जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने के लिए डिज़ाइन किया गया है। ग्रीन ईंडिया मिशन राष्ट्रीय कार्य योजना, जलवायु परिवर्तन के तहत आठ जलवायु परिवर्तन मिशनों में से एक है। वन, लोगों की आजीविका की सुरक्षा के लिए सीधे तौर पर जिम्मेदार हैं। यह जलवायु सुधार में योगदान देते हैं तथा विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं प्रदान करते हैं। यह एक ज्ञात तथ्य है कि जलवायु परिवर्तन की अग्रणी घटना से यह वन गंभीर रूप से प्रभावित होंगे तथा उनके आकार तथा गुणवत्ता में कमी आएगी। अध्ययनों से संकेत मिलता है कि अगले 30 वर्षों में हमारे 75 प्रतिशत से अधिक वन जलवायु परिवर्तन के कारण गंभीर रूप से प्रभावित होने जा रहे हैं। इन वनों की उत्पादकता कम होने से सीमावर्ती क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की आजीविका प्रभावित होने का खतरा मंडराने लगेगा जो कि अपनी दैनिक जरूरतों के लिए वन उत्पादों पर भारी निर्भर करते हैं।

वातावरण में कार्बन–डाईआक्साइड की मात्रा, जलवायु परिवर्तन की समस्या से सीधे पैमाने पर और तेजी से जुड़ी हुई है। भूमि उपयोग, भूमि उपयोग परिवर्तन और वानिकी कुछ ऐसे क्षेत्र है जो वातावरण में कार्बन डाईआक्साइड को सीधे कम कर सकते हैं क्योंकि पेड़–पौधे कार्बन को कार्बन डाईआक्साइड से पृथक कर उसे एक लंबी अवधि के लिए बायोमास के रूप में संचित करने में सक्षम हैं। लकड़ी तथा लकड़ी के उत्पादों का सतत रूप से होने वाले उपयोग से भी जलवायु परिवर्तन का खतरा कम होता है। जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने में वानिकी क्षेत्र के महत्व को विश्व स्तर पर मान्यता प्राप्त हुई है अतः वन संरक्षण एवं विकास हेतु अनेक उपाए किए जा रहे हैं।

ग्रीन ईंडिया मिशन के उद्देश्य :

ग्रीन ईंडिया मिशन का उद्देश्य अनुकूलन और शमन उपायों के संयोजन से जलवायु परिवर्तन का जवाब देना है, जिससे निम्नलिखित में मदद मिलेगी:

- निरंतर प्रबंधित वनों और अन्य परितंत्रों में कार्बन सिंक बढ़ाना
- संवेदनशील प्रजातियों/पारिस्थितिक प्रणालियों का बदलते जलवायु के लिए अनुकूलन
- जलवायु परिवर्तनशीलता की स्थिति में वनों पर निर्भर स्थानीय समुदायों का अनुकूलन

ग्रीन ईंडिया मिशन के लक्ष्य :

- पांच मिलियन हैक्टेयर वन/गैर–वन भूमि पर वन/हरित आवरण बढ़ाना और पांच मिलियन हैक्टेयर अतिरिक्त भूमि पर वनों की गुणवत्ता में सुधार
- 10 मिलियन हैक्टेयर भूमि के उपचार के परिणाम स्वरूप बेहतर पारिस्थितिक तंत्र सेवाएं प्रदान करना जिसमें जैव–विविधता, हाईड्रोलौजिकल सेवाएं कार्बन पृथक्करण आदि शामिल है।
- वनों पर निर्भर 30 लाख परिवारों की आजीविका में वृद्धि
- वर्ष 2020 तक कार्बन डाईआक्साईड पृथक्करण में 50–60 लाख टन तक की बढ़ोतरी

महत्वपूर्ण परिवर्तन :

मिशन में विभिन्न नवीन दृष्टिकोण हैं जो कि वानिकी क्षेत्र में दशकों के अनुभवों से उभर कर आए हैं।

लैंडस्केप दृष्टिकोण–

ग्रीन ईंडिया मिशन में लैंडस्केप दृष्टिकोण को अपनाया जाना है जो वाटरशैड को एकीकृत करने का एक वैज्ञानिक और समग्र तरीका है। वाटरशैड एक ऐसी भौगोलिक ईकाई है जिसमें एक क्षेत्र में की गई गतिविधियां दूसरे हिस्सों को प्रभावित करती हैं। माईक्रो वाटरशैड, वास्तव में कार्ययोजना बनाने का एक उपयुक्त पैमाना है। वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए इन प्रयासों को एकत्रित करने की आवश्यकता है। सब–लैंडस्केप/ उप–परिदृश्य का क्षेत्र 5000–7000 हैक्टैयर होता है। किसी भी लैंडस्केप में विभिन्न उप–परिदृष्य होते हैं, जो आमतौर पर जैव–भौगोलिक क्षेत्र के अनुरूप होते हैं। योजना बनाने के

लिए गांव/समुदाय को बुनियादी ईकाई माना गया है। योजना के तहत संयुक्त वन प्रबंधन की सफलता का लाभ लेने के लिए, स्थानीय समुदायों के विभिन्न हितधारकों से परामर्श कर प्रत्येक संयुक्त वन प्रबंध समिति क्षेत्रों के लिए अलग से माईक्रो–प्लान बनाई जाएगी।

लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण :

योजना के अनुसार वनों तथा प्राकृतिक संसाधनों के विकेंद्रीकृत अधिकारों की चाबी मजबूत ग्राम सभाओं के हाथ में होगी। यदि ग्राम सभा सजग होगी तो विभिन्न संस्थाओं में स्थानीय स्तर पर बेहतर समन्वय हो पाएगा तथा इन संगठनों की बेहतर जवाबदेही तय हो सकेगी। इस प्रकार यह मिशन, विषयगत समितियों और उपयोगकर्ता समूहों के सहयोग से ग्राम सभाओं को व्यापक संस्थानों के रूप में सशक्त बनाएगा। मिशन के तहत गठित समितियों, उपयोगकर्ता समूहो व स्वयं सहायता समूहों द्वारा प्रदत्त नेतृत्व, ग्राम सभाओं और ग्राम पंचायतों को भी सशक्त बनाने में सहायक होगा। इसके अतिरिक्त यह आजीविका को बढ़ावा देने वाले समूहों जैसे कि स्वयं सहायता समूहों आदि को वन सुरक्षा, संरक्षण तथा आजीविका की गतिविधियों की योजना बनाने में सहायक होगा।

विभिन्न कार्यक्रमों में आपसी–तालमेल :

विभिन्न संस्थाओं द्वारा हरित आवरण वृद्धि तथा भू–विकास हेतु चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों जैसे एकीकृत बंजर भूमि कार्यक्रम, राष्ट्रीय रोज़गार गारंटी योजना , राष्ट्रीय बैंबू मिशन, बागवानी मिशन, पशुपालन विकास योजनाएं तथा अक्षय ऊर्जा आदि कार्यक्रमों में समन्वय स्थापित करने हेतु, मिशन महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। इसी प्रकार पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के राष्ट्रीय वनीकरण कार्यक्रम, वन प्रबन्धन प्रणालियों का सशक्तिकरण, कैम्पा और 13वें वित आयोग के तहत योजनाओं में समन्वय स्थापित करने में भी मिशन सहायक होगा।

हिमाचल प्रदेश के संदर्भ में ग्रीन ईंडिया मिशन :

हिमाचल प्रदेश राज्य के संदर्भ में मिशन विशेष महत्व रखता है क्योंकि राज्य की अधिकतर आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है। प्राचीन काल से स्थानीय लोग ईंधन, इमारती लकड़ी, चारा, औषधीय पौधों आदि के लिए प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहे हैं। हिमाचल प्रदेश, अनेक नदी प्रणालियों को संजोए है, इसलिए यहां होने वाली किसी भी गतिविधि का सीधा असर इन नदियों के निचले हिस्से में रहने वाले लाखों लागों के जीवन पर पड़ता है। संरक्षण की परंपरा और मूल्य, हिमाचल प्रदेश की जीवन शैली के अभिन्न अंग हैं। हिमाचल प्रदेश में विधायिका एवं न्यायपालिका द्वारा समय–समय पर उठाए गए कदमों के परिणामस्वरूप वनों तथा अन्य संवेदनशील पर्यावरण प्रणालियों का संरक्षण हुआ है।

हाल ही में हिमाचल प्रदेश राज्य में पर्यावरण और वन मंत्रालय के सहयोग से ग्रीन ईंडिया मिशन का सचिवालय स्थापित किया गया है। राज्य में मिशन का नेतृत्व अतिरिक्त प्रधान मुख्य वन संरक्षक स्तर के अधिकारी द्वारा किया जा रहा है जिसे एक उप वन संरक्षक की सहायता प्राप्त है। क्योंकि मिशन जियो–सूचना प्रणाली की सहायता से अपनी योजना को अंजाम देगा इसलिए, विभाग की जी0आई0एस सैल के क्रियान्वयन की जिम्मेदारी भी इसे ही सौंपी गई है। मिशन की विभिन्न गतिविधियों को संचालित करने हेतु दो जी.आई.एस. विशेषज्ञों और छह तकनीकी सहायकों की एक टीम नियुक्त की गई है। चालू वर्ष के दौरान मिशन विभिन्न योजना गतिविधियों को कार्यान्वित कर रहा है। योजना के अंतर्गत चार चिन्हित उप–परिदृश्यों में प्रायोगिक कार्यान्वयन भी किया जा रहा है, जो मंडी डिवीजन के कटौला वन परिक्षेत्र, बिलासपुर मण्डल के कोहू वन परिक्षेत्र, धर्मशाला वन मण्डल के कांगड़ा वन परिक्षेत्र तथा ऊना वन मण्डल के रामशहर तथा बंगाणा में स्थित है। इन क्षेत्रों में कार्य इकाइयों और प्रवेश बिंदू गतिविधियों की पहचान की जा रही है। वानिकी एवं बागवानी विश्वविद्यालय स्थित राष्ट्रीय वनीकरण एवं पारिस्थितिकी विकास बोर्ड के क्षेत्रीय कार्यालय के सहयोग से विस्तृत सूक्ष्म योजनाएं तैयार की जा रही हैं। भारत सरकार को प्रस्तुत करने के लिए हरित भारत मिशन सचिवालय भी एक जी.आई.एस. आधारित परिप्रेक्ष्य दशक योजना तैयार कर रहा है। मिशन के तहत, उच्च जोखिम के परिदृश्यों की पहचान के लिए विभिन्न स्तरों की जानकारी जैसे कि वन, जैव विविधता, वाटरशैड, जन सांख्यिकीय डाटा आदि का इस्तेमाल किया जा रहा है।

आज विश्व ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन की समस्या से जूझ रहा है। ग्रीन ईंडिया मिशन के तहत वन विभाग द्वारा प्रदेश में चलाए जा रहे कार्यक्रम निश्चित रूप से इस समस्या के समाधान हेतु एक मील का पत्थर साबित होंगे।

हिमाचल प्रदेश की समृद्ध वन सम्पदा

देवी दयार वन : (9000–11000 फुट ऊँचाई क्षेत्र)

प्रदेश के ऊँचाई वाले (लाहौल एवं स्पिति) आदि क्षेत्रों में पाई जाते हैं। इसकी सुगन्धित पत्तियाँ मन्दिर व गोम्पा में पूजा के लिए तथा लकड़ी भवन निर्माण में प्रयोग की जाती है।

रई तोष वन : (7000 से 9000 फुट ऊँचाई क्षेत्र)

प्रदेश के ठण्डे क्षेत्र में होने के कारण इनका विकास बहुत धीमी गति से होता है। यह हिमालय की नाजुक पारिस्थितिकी को संतुलित रखने तथा अनके दुर्लभ वन्यजीवों को पोषित करने में अहम भूमिका निभाते हैं।

देवदार वन : (6000 से 8000 फुट ऊँचाई क्षेत्र)

हिमाचल प्रदेश में ईमारती लकड़ी का मुख्य स्त्रोत। देवताओं के वृक्ष के रूप में अपनी पहचान रखने वाले इस वृक्ष को हिमाचल प्रदेश का राज्य वृक्ष घोषित किया गया है। यह वृक्ष 120 वर्ष में विकसित होता है इसलिए इसकी लकड़ी का उपयोग सोच–समझ कर किया जाना चाहिए।

कायल वन : (5000 से 7000 फुट ऊँचाई क्षेत्र)

प्रदेश के मध्य ऊँचाई क्षेत्रों में देवदार के पश्चात्, इमारती लकड़ी की यह दूसरी प्रमुख प्रजाती है। अच्छी इमारती लकड़ी प्राप्त करने के लिए कायल के वनों को अवैज्ञानिक छाँग तथा आग से बचाना भी आवश्यक हो जाता है।

चीड़ वन : (3000 से 5500 फुट ऊँचाई क्षेत्र)

चीड़ प्रदेश के निचले भागों में पाई जाने वाली प्रमुख प्रजाती है। प्रदेश के ऐसे क्षेत्र जहाँ अन्य प्रजातियाँ नहीं उग पाती, वहाँ यह प्रजाती पर्यावरण संतुलन में मुख्य भूमिका निभाती है। चीड़ से निकलने वाले बिरोजे व चिलारू आग के प्रति अत्यन्त संवेदनशील होते हैं लेकिन इनके विक्रय से किसानों को अतिरिक्त आय भी प्राप्त होती है।

चौड़ी पत्ती वन : (1500 से 6500 फुट ऊँचाई क्षेत्र)

हमारे ग्रामीणों के दैनिक जीवन में चौड़ी पत्ती प्रजातियों के वनों की विशेष भूमिका है। प्रदेश की अधिकतर आबादी अपनी रोजमर्रा की बालन, चारे, फल- फूल, जड़ी-बूटियों व रेशा आदि की आवश्यकताओं के लिए मूलतः इन्हीं पर निर्भर है। अपनी निजी भूमि व उनके आस–पास चौड़ीपत्ती के वृक्ष लगाने से वनों पर पड़ने वाले दबाव को कम किया जा सकता है।

19वें राष्ट्रीय खेल व हिमाचल प्रदेश का प्रदर्शन

नागेश गुलेरिया, भा.व.से.

हिमाचल प्रदेश वन खेलकूद वं कल्याण सोसाईटी एक तरफ जहां वन कर्मचारियों के कल्याण के कई कार्य कर रही है वहीं वन विभाग की खेलकूद, चाहे वह राज्य–स्तरीय हो चाहे राष्ट्रीय स्तरीय हो, में अहम योगदान दे रही है। पिछले वर्ष हमने वन कर्मियों के कल्याण के लिए धन का योगदान सोसाईटी की तरफ से उनके परिवारों को दिया वहीं हि.प्र. वन खेलकूद व कल्याण सोसाईटी की छत्रछाया में 17वीं राज्य–स्तरीय वन खेलकूद व ड्यूटी प्रतियोगिता का सुन्दरनगर में सफल आयोजन भी किया । सोसाईटी की उपयोगिता उस समय सामने आई जब वन विभाग के पास उक्त खेलकूद के लिए सीमित सरकारी धन था तथा सोसाईटी के धन से इसमें अहम योगदान दिया गया ।

17वीं राज्य वन विभाग खेलकूद व डियूटी प्रतियोगिता का सफल आयोजन सुन्दरनगर में किया गया । तीन दिनों तक प्रदेश के विभिन्न हिस्सों से आये हमारे प्रतिभागी जहां दिन में खेलकूद में अपना पसीना बहाते थे वहीं संध्या में हिमाचली संस्कृति का उत्कृष्ठ नमूना भी प्रस्तुत करते थे । प्रतियोगिता जहां एक ओर खिलाड़ियों की फिजिकल फिटनैस का प्रमाण थी, वहीं प्रश्नोत्तरी, विचार–विमर्श इत्यादि प्रतियोगियों के बौद्धिक विकास का प्रमाण थी ।

सुन्दरनगर में राज्य स्तरीय खेलकूद के आयोजन के बाद हमारे सामने 19वें राष्ट्रीय खेल हमारे पड़ोसी राज्य उत्तराखंड में दिसम्बर 2011 को निश्चित हुए थे । प्रतियोगिता का स्थान देहरादून निश्चित हुआ । वन विभाग हिमाचल प्रदेश ने भी अपना 58 सदसीय दल इस प्रतियोगिता के लिए भेजना निश्चित किया । सरकारी स्तर पर धन की कमी एक बार फिर हमारे आड़े आ रही थी । ऐसे में हमारे बचाव के लिए हिमाचल प्रदेश राज्य वन खेलकूद व कल्याण सोसाईटी एक बार फिर आगे आई और हम अपने खिलाड़ियों को बेहतर सुविधाएं, उचित प्रशिक्षण, अच्छे खेल उपकरण व बेहतर साजोसामान दे पाए ।

19वीं राष्ट्रीय खेलकूद प्रतियोगिता, हिमाचल प्रदेश जैसे छोटे राज्य के छोटे से प्रतियोगी दल के लिए बहुत ही अच्छे परिणाम लेकर आई । यह पहला मौका था कि हम राष्ट्रीय स्तर पर अपनी उपस्थिति बहुत ही प्रभावशाली ढ़ंग से दर्ज करवा पाये । हमारे प्रतियोगियों ने 7 स्वर्ण, 5 रजत, 8 कांस्य तथा अन्य 7 प्रतिस्पर्धाओं में चौथा स्थान प्राप्त करके देश में कई बड़े राज्यों को पीछे छोडकर छठा स्थान प्राप्त किया। ऐसा पहली बार हुआ कि राष्ट्रीय

खेल–कूद प्रतियोगिताओं में हमारे सारे प्रतिभागी या तो पदक जीत कर आए या कम से कम चौथे स्थान पर रहे।

राष्ट्रीय खेलों में फील्ड गेम्स में हमने बहुत ही प्रभावशाली उपस्थिति दर्ज की । महिला कबड्डी में जो कि राष्ट्रीय स्तर पर पहली बार खेली जा रही थी, हमारी लड़कियों ने फाइनल में एकतरफा मुकाबले में उत्तराखंड को हरा कर प्रथम स्वर्ण पदक प्राप्त करने का गौरव हासिल किया । पुरूष वॉलीबाल में हम पिछले तीन वर्षों से राष्ट्रीय चैम्पियन थे परन्तु किन्हीं अपरिहार्य कारणों से नए खिलाड़ियों के चयन से हमारी टीम पर अपने चैम्पियन होने के गौरव को बरकरार रखने के लिए काफी दबाव था। परन्तु श्री डी.एस. धोल्टा की कड़ी मेहनत व हमारे नये खिलाड़ियों की लगन रंग लाई और हमने फाईनल के कड़े मुकाबले में विरोधी टीम को हराकर अपना चैम्पियन होने का गौरव बरकरार रखा। पुरूष कबड्डी में भी इस बार हमारे खिलाड़ी

बेहतरीन तैयारी के साथ मैदान में उतरे थे। हमने कर्नाटक, हरियाणा जैसी अच्छी टीमों को पछाड़ कर फाइनल में प्रवेश किया। परन्तु फाईनल में तमिलनाडू की टीम से पार नही पा सके व हमें रजत पदक के साथ ही संतोष करना पड़ा। बास्केटबाल में भी हमारी टीम ने इस वर्ष बहुत ही अच्छे तालमेल के साथ प्रदर्शन किया परन्तु बहुत ही कड़े मुकाबले में कर्नाटक की टीम से मात्र 3 अंकों से सेमीफाइनल में हार गये । बाद में कर्नाटक की टीम चैम्पियन बनी व हमारी टीम को तीसरे स्थान के मैच में विरोधी टीम को आसानी से मात देकर कांस्य पदक के साथ संतोष करना पड़ा ।

इन्डोर खेलों में एक बार फिर संजीव सूद ने अपना वर्चस्व बनाए रखा । संजीव ने स्कवेश में दो गोल्ड तथा टी0टी0 में एक सिलवर व 3 कांस्य पदक जीत कर हिमाचल की झोली में डाल दिए । बैडमिन्टन में भी हमारे खिलाड़ी अच्छा प्रदर्शन करने में कामयाब रहे परन्तु हमारे खिलाड़ियों को बैडमिन्टन में रजत व कांस्य से ही संतोष करना पड़ा । कमलजीत व रीना ने रजत व अनिल शर्मा ने कांस्य पदक जीत कर हिमाचल प्रदेश की अंक तालिका बढ़ाने में अपना योगदान दिया ।

ऐथेलैटिक्स में गत वर्षों की भांति जहां हमारा ट्रम्पकार्ड संजो देवी ही साबित हुई वहीं इस वर्ष कुछ अन्य खिलाड़ियों ने अच्छा प्रदर्शन करके प्रदेश के लिए योगदान दिया । संजो देवी ने एक बार फिर शॉटफुट और डिस्कस थ्रो में स्वर्ण पदक जीत कर अपना दमखम साबित किया । अंकुर व उसकी टीम ने 4×100 मीटर रिले दौड़ में गोल्ड, कमल किशोर ने 100 मीटर में सिल्वर, कुलदीप ने शॉटपूट में सिल्वर तथा अन्य ने तीन कॉस्य पदक जीत कर अपना योगदान दिया ।

कुल मिलाकर 7 स्वर्ण, 5 रजत, 8 कांस्य तथा 7 खेलों में चौथे स्थान पर रह कर हम राष्ट्रीय स्तर पर 88 अंक लेकर छटे स्थान पर रहे । इसके लिए जहां यह हमारे सभी खिलाड़ियों की कड़ी मेहनत का फल है वहीं हमारे प्रधान मुख्य अरण्यपाल, श्री आर. के. गुप्ता के मार्गदर्शन व प्रोत्साहन का बहुत बड़ा योगदान है। वन विभाग के सभी कर्मचारी व अधिकारी इसके लिए बधाई के पात्र हैं ।

वन विभाग उत्तराखंड ने 19वें खेलकूद को बहुत सफलतापूर्वक आयोजित किया । अगर मैं यह कहूं कि आज तक के राष्ट्रीय खेलकूद आयोजनों में यह सर्वश्रेष्ठ था तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी और ऐसे मैगा आयोजनों को सफलतापूर्वक करवाने के लिए कमांडर का रोल बहुत महत्वपूर्ण होता है। उत्तराखंड के प्रधान मुख्य अरण्यपाल श्री रावत इसके लिए बधाई के पात्र हैं। हमने देखा कि श्री रावत दिनभर खिलाड़ियों के बीच में रहकर जहां खुद खेलों में भाग ले रहे थे वहीं समय–2 पर अपनी व अपनी पसंदीदा टीमों का उत्साहवर्धन करने में भी आगे होते थे । शाम को डी.जे. की धुन पर खिलाड़ियों के बीच में शामिल होकर नाच गाने से लेकर आये हुए मेहमानों, वरिष्ठ अधिकारियों का व्यक्तिगत तौर पर ख्याल रखते रहे। हालांकि उनकी सभी आयोजन कमेटियां बहुत ही बेहतरीन कार्य कर रही थी, चाहे खिलाड़ियों को ठहरने की व्यवस्था हो, आने जाने की या फिर खाने पीने की व्यवस्था हो, हर जगह कमेटियां सभी का सहयोग करने को तत्तपर रहती थी । मुझे विश्वास है कि देश के कोने–2 से आये प्रत्येक प्रतिभागी ने देहरादून में उतरांचल वन विभाग के बेहतरीन आतिथ्य का आनन्द लिया है और 19वीं राष्ट्रीय खेलकूद प्रतियोगिता को इस संकल्प के साथ अलविदा कहा कि अगले वर्ष में नये जोश व उमंग के साथ फिर मिलेंगे। एक बार फिर राष्ट्रीय खेलकूद प्रतियोगिता हमारे पड़ोसी राज्य हरियाणा को मिली है, उन्हें हमारी शुभकामनायें ।

तेंदुए की समस्या : एक दृष्टिकोण

संगीता चन्देल, हि.प्र.व.से.

भारत वर्ष में मानव तेंदुआ संघर्ष अब आम समस्या बन गई है। पिछले कुछ वर्षों में तेंदुए का भटकते हुए बस्ती में आ कर जान–माल को नुकसान पहुंचाने की घटनाओं में काफी वृद्धि दर्ज की गई है। कुत्ते, भेड़–बकरी तथा सूअर जैसे छोटे पालतू पशुओं को बड़ी सफाई से अपना शिकार बना कर अपनी भूख को संतुष्ट करने की क्षमता तथा मानव की उपस्थिति के प्रति उसकी सहनशीलता का अर्थ है कि तेंदुए अन्य मांसाहारियों के विपरीत है। इसीलिए तेंदुए आमतौर पर ग्रामीण क्षेत्रों व शहरों की परीधि में पाए जाते हैं और मानव–तेंदुआ संर्घष की अधिकतर घटनाएं भी यहीं होती हैं।

आज पूरे देश की भांति हिमाचल प्रदेश में भी तेंदुए के अस्तित्व पर प्रत्यक्ष एवं परोक्ष खतरे मंडरा रहे हैं। प्रत्यक्ष खतरों की श्रेणी में अवैध शिकार व मानव के साथ उनके संघर्ष को रखा जा सकता है क्योंकि अपने प्राकृतिक आहार में अवैध शिकार के कारण हुई कमी से तेंदुए को अपना रूख बस्ती की ओर करना पड़ता है और उसे मानव के प्रतिशोध का कोपभाजक बन कर अपनी जान से हाथ धोना पड़ता है। अप्रत्यक्ष खतरों की श्रेणी में तेंदुए के प्राकृतिक वासस्थल में कमी, गिरावट व विखंडन को रखा जा सकता है जिसके कारण तेंदुआ–मानव संघर्ष बढ़ता है। यह जरूरी नहीं कि प्रत्येक भटका हुआ तेंदुआ मानव–तेंदुआ संघर्ष का करण बने, लेकिन हत्या, मानव–पशु विवाद की परम अभिव्यक्ति है। जब तेंदुए द्वारा जान–माल को नुकसान पहुंचाया जाता है तो मानव जवाब में तेंदुए का शिकार या उसे ज़हर देने के लिए मजबूर हो जाते हैं या ज़िला प्रशासन के लिए कानून व्यवस्था की समस्या पैदा हो जाती है। भारतवर्ष में तेंदुए को मारने की अनुमति केवल तभी दी जाती है जब उसे आदमखोर घोषित किया गया हो। ज्यादातर संघर्ष की अन्य घटनाओं में खतरनाक तेंदुए को पकड़कर चिड़ियाघर में बन्द कर दिया जाता है किन्तु ऐसा करना कोई इस समस्या का स्थाई हल नहीं है। इससे और कई समस्याएं जन्म ले लेती हैं एक ओर जब हम जंगल से एक तेंदुए को हटा देते हैं तो उसके स्थान पर नए अनघड़ तेंदुए कब्जा कर लेते हैं। समस्या वहीं की वहीं रहती है सिवाए इसके कि हमने एक और तेंदुए को खो दिया है। इसलिए मानव–तेंदुआ संघर्ष जंगली तेंदुए के अस्तित्व के लिए एक बड़ा खतरा बनकर सामने आया है। इस संघर्ष से केवल तेंदुए की संख्या कम होती है लेकिन मानव–तेंदुआ संघर्ष ज्यों का त्यों रह जाता है।

एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2010 के पहले छह महीने में लगभग 200 तेंदुए मारे गए हैं। जून 2010 तक 61 मौतें केवल उत्तराखण्ड राज्य से ही थीं। प्रसिद्ध गाजियाबाद जब्ती में 1200 से अधिक मृत तेंदुए वसूले गये। 18080 नाखुन हमें लंबे समय के लिए याद रहने चाहिए। इसी प्रकार वर्ष 2011 में लगभग 358 तेंदुए मृत सूचित किए गये जिसमें से होने वाली 60 प्रतिशत मौतों के लिए केवल मनुष्य को सीधे जिम्मेदार ठहराया गया और वर्ष 2012 के दौरान अब तक भारत की वन्यजीव संरक्षण सोसायटी जो सरकार की प्रवर्तन एजेंसियों के साथ मिलकर काम करती है, के सर्वेक्षण ने 234 तेंदुए की मौत की सूचना दी है। वास्तविक आंकड़ा निश्चित रूप से दी गई सूचना से बहुत अधिक होगा। संघर्ष का क्षेत्र उत्तराखण्ड और हिमाचल प्रदेश के पहाड़ों से लेकर आंध्र प्रदेश के सूखे झाड़ीनुमा जंगलो, गुजरात, जम्मू और कश्मीर और महाराष्ट्र के गन्ने के खेतों तक फैला हुआ है। अफसोस की बात है कि वन्य प्राणियों, विशेष रूप से मांसाहारी जानवरों के प्रति लोगों में सहनशीलता गायब हो रही है।

संघर्ष मुख्य रूप से शिकार की कमी के कारण होता है जो तेंदुए को मानव बस्तियों की ओर खदेड़ देता है। अभ्यारण्य क्षेत्रों में जहां अच्छा शिकार आधार उपलब्ध है, वहां तेंदुआ–मानव संघर्ष दुर्लभ है। यही बात हिमाचल प्रदेश के संदर्भ में लागू होती है, यहां ज्यादातर मामले मानव बस्तियों के पास अवक्रमित निवासों में है। पिछले दस वर्षों के दौरान हिमाचल प्रदेश के हमीरपुर ज़िले में 8 तेंदुए आदमखोर घोषित करने के बाद निशानेबाजों द्वारा मारे गए थे। इसी तरह 47 तेंदुए प्राकृतिक मौत/बीमारी से मृत पाए गए और केवल हमीरपुर ज़िले में पिछले दस वर्षों के दौरान 6 तेंदुए पकड़े गये और बचाव केन्द्रों को भेजे गए। वर्तमान में पालमपुर स्थित गोपालपुर चिड़ियाघर, धौलाधार नेचर पार्क में 13 तेंदुए रहते हैं, जिन्हें हिमाचल प्रदेश के विभिन्न ज़िलों से बचाया गया है। स्वाभाविक रूप से राज्य का

परिदृश्य बहुत अधिक ऊपर होगा।

मानव तेंदुआ संघर्ष प्रबधंन

कार्निवोर लूटपाट की रोकथाम :– कार्निवोर लूटपाट को कम करने के क्रम में मासांहारियों द्वारा लूटपाट के कारणों का पता लगाना आवश्यक है, और तदनुसार कार्यवाही करनी होगी। इसके लिए संघर्ष क्षेत्र का आकलन जरूरी है, अगर वास स्थल में बाधा है तो पर्यावरण सुधार करना होगा।

स्वाईमानसिंह अभ्यारण्य, एक नया वाघ स्वर्ग एक मामले का अध्ययन– प्रबंधन आदानों के परिणाम के रूप में फिर से वाघों को बसाना : मानव और तेंदुए को संभव हद तक अलग रखने के लिए गश्त और ज्ञात तेंदुआ निवास को मजबूत करना भी संघर्ष को कम कर सकता है।

वन्यजीव आवाजाही के लिए बैरियरः– कुछ क्षेत्रों में जानवरों को मानव बस्तियों के पार जाने से रोकने के लिए दीवार के जैसी भौतिक बाधाओं का निर्माण संभव हो सकता है जैसे कि रणथमभौर में कुछ स्थानों पर दीवार का निर्माण किया गया है, जहां कोई कनेक्टिविटी है।

कम शिकार आधार :– शिकार आधार में गिरावट के कारण मांसाहारी जानवर अपने आहार में बदलाव लाते हैं और मवेशियों को खाते हैं क्योंकि ये पकड़ने आसान होते हैं और इनके पास बचने की सीमित संभावनाएं होती हैं (मिश्रा, 2003, पैटरसन, 2004) निवास स्थान में सुधार इस समस्या का समाधान हो सकता है।

जागरूकता पैदा करना :– शिकार संवेदन शील क्षेत्रों की पहचान और जागरूकता पैदा कर अपनेपन की भावना में सुधार और वन्य जीवों के संरक्षण और प्रबंधन में लोगों की भागीदारी से भी तेंदुआ संरक्षण में बहुत मदद मिलेगी। तेंदुए के साथ स्थान साझा करने वाले लोगों में जागरूकता पैदा की जानी चाहिए। सामान्य रूप से मानव –वन्य प्राणी संघर्ष की समस्या की बारीकियों के बारे में मीडिया को संवेदनशील बनाना ओर विशेष रूप से तेंदुआ लूटपाट, जागरूकता की रणनीति का एक अभिन्न अंग होना चाहिए। तेंदुए के साथ की आक्रामक मुठभेड़ों की ही सूचना देना, स्थानीय लोगों की सहनशीलता को खत्म कर सकता है और जनता और राजनीतिक दबाव के चलते, वन विभाग अनावश्यक रूप से जंगली जानवरों के पकड़ने के लिए मजबूर होगा और इससे स्थिति और भी खराब होगी।

मुआवजाः– मुआवजे की बढ़ी हुई राशि और शीर्घ भुगतान, दो ऐसे मुद्दे हैं जो अगर हल हों तो प्रतिरोध में जानवर की हत्या को रोकने के लिए बहुत मददगार साबित होंगे। मुआवजा प्रबंधन तंत्र को इस तरह तैयार किया जाना चाहिए कि वह प्रभावित समुदायों द्वारा क्षति के प्रति सहनशीलता के स्तर को बढ़ाने में मदद करें और स्वयं प्रत्यक्ष कार्रवाई कर उन्हें रोकें।

पशुपालन में सुधार :– स्टाल फीडिंग को बढ़ावा देना और ग्रामीणों के पशुओं में गुणवत्ता नस्ल सुधार और घने तेंदुआ क्षेत्रों के आसपास बफर प्रबंध ताकि खुले में घूमते पशु बाहरी किनारे से दूर रहें, संघर्ष को कम करने में भी मदद कर सकते हैं। इसके अलावा हर जिला/प्रभाग (मण्डल) मुख्यालय को पशु स्थिरीकरण उपकरण (दवा वितरण प्रोजेक्टर), ड्रग्स, ट्रांक्यूलाइजर/प्रशांतक (Xylazine), dissociative (Ketamine), उत्क्रमण दवाओं, पिंजरों, योग्य तथा वन्य प्राणी प्रशिक्षित पशुचिकित्सक से लैस किया जाना चाहिए। मानव तेंदुआ संघर्ष का अंत असंभव है, लेकिन उचित प्रबंधन, तैयारी और शीघ्र कार्रवाई के द्वारा निश्चित रूप से इसे सहनशीलता के स्तर तक कम किया जा सकता है।

मानव-तेंदुआ संघर्ष कम करने में अपना सहयोग दें

तेंदुओं की जीवनशैली

- तेंदुआ एकांतवासी होता है, मनुष्य से डरता है और उनसे बच कर रहने की कोशिश करता है।
- तेंदुए अपने क्षेत्र की सीमा के अंदर ही रहना पसंद करते हैं।
- तेंदुए अपने क्षेत्र को बहुत अच्छी तरह से जानते हैं और उसके चप्पे–चप्पे से परिचित होते हैं।
- तेंदुए को अपने क्षेत्र से निकाल देने पर, कोई दूसरा अथवा छोटा तेंदुआ उस क्षेत्र को अपना घर बना लेता है। नई जगह से परिचित न होने के कारण मनुष्यों व पालतु जानवरों से उसके संर्घष की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।
- तेंदुए परिस्थिति के अनुसार ढल जाते हैं तथा आबादी वाले क्षेत्र के नजदीक रह सकते हैं।

तेंदुए के क्षेत्र में बरती जाने वाली सावधानियां

- कभी भी तेंदुए का पीछा न करें, डर के कारण वह हमला कर सकता है।
- बच्चों व महिलाओं को अकेला न छोड़ें। छोटे बच्चों को खासतौर से तेंदुए गलती से अपना शिकार मान लेते हैं।
- शौच को जाने तथा अंधेरे में बाहर निकलते समय गाना गाते हुए, बात करते हुए अथवा ट्रांजिस्टर या मोबाइल पर गाना बजाते हुए जाएं।
- जब भी तेंदुआ दिखाई दे जोर से चिल्लाएं, हाथ हिलाएं किंतु उसका पीछा न करें।
- बच्चे बाहर हमेशा झुंड (ग्रुप) में निकलें।
- घर व गांव के आसपास पालतु कुत्ते, बकरी व सूअर तेंदुए को आकर्षित करते हैं।
- आसपास का कूड़ा कचरा आवारा पशुओं को आकर्षित करता है और आवारा पशु तेंदुए को।
- तेंदुए वाले जंगलों के आसपास के क्षेत्रों में खुले व आवारा पशुओं की संख्या को कम से कम रखें।
- पशु बांधने के कमरों (गवैणों– ओबरों) को मज़बूत रखें, इनके दरवाजों को बंद रखें और पशुओं को बाहर न बांधें।
- तेंदुआ आत्मरक्षा के लिए हमला कर सकता है इसलिए तेंदुआ दिखने पर उसे उत्तेजित न करें।

गाँव के नज़दीक तेंदुओं की संख्या कैसे कम करें

- आवारा कुत्ते, सूअर, बकरी आदि गाँव के आसपास न रहने दें।
- अवैध शिकार की रोकथाम में सहयोग दें ताकि जंगलों में जंगली जानवरों की संख्या कम न हो और तेंदुओं को उनका भरपूर जंगली शिकार मिल सके।
- जंगली शिकार अगर तेंदुए को उपलब्ध हो तो पालतु जानवरों पर हमले कम होंगे।
- फंदा लगाने को प्रोत्साहित न करें। घायल तेंदुआ खतरनाक हो सकता है क्योंकि वह ठीक से शिकार नहीं कर सकता।
- अपने पशुओं खासकर कुत्तों को सुरक्षित रखें।

हिमाचल प्रदेश की चिन्हित लुप्तप्राय: वनऔषधीय प्रजातियां

क्र. सं.	वैज्ञानिक नाम	स्थानीय नाम
1	*Aconitum heterophyllum*	पतिस
2	*Aconitum deinorrhizum*	मोहरा
3	*Atropa acuminata (= Atropa belladona)*	झरका
4	*Dactylorhiza hatagirea (= Orchis latifolia)*	सालम पांजा
5	*Gentiana kurroo*	कुटकी/त्रेमन
6	*Jurinea dolomiaea*	धूप
7	*Picrorhiza curroa*	कड़ू
8	*Swertia chirayita (= S. chirata)*	चिरायता
9	*Lilium polyphyllum*	क्षीर ककोली
10	*Malaxis muscifera*	जीवक
11	*Habenaria edgeworthii*	रिधी
12	*Fritillaria roylei*	ककोली
13	*Habenaria intermedia*	वृधि
14	*Polygonatum cirrhifolium*	सालम मिश्री/मेदा
15	*Polygonatum multiflorum*	सालम मिश्री
16	*Polygonatum verticillatum*	महामेदा
17	*Malaxis acuminata*	रशभाक
18	*Roscoea alpina*	ककोली
19	*Roscoea procera*	ककोली
20	*Angelica glauca*	चोरा
21	*Arnebia benthami*	रतनजोत
22	*Arnebia euchroma*	रतनजोत
23	*Berberis aristata*	कशमल
24	*Colchicum luteum*	सुरंजन
25	*Dioscorea deltoidea*	शिंगली–मिंगली
26	*Nardostachys grandiflora*	जटामांसी
27	*Paris polyphylla*	गोर बच
28	*Podophyllum hexandrum (=P. emodi)*	वनककड़ी
29	*Rheum moorcroftianum*	रेवन चीनी
30	*Saussurea obvallata*	ब्रह्म कमल
31	*Zanthoxylum armatum (=Z. alatum)*	तिरमिर

32	*Betula utilis*	भोजपत्र
33	*Taxus wallichaiana (=T. baccata*	रखाल
34	*Cinnamomum tamala*	तेजपत्ता
35	*Litsea glutinosa (=L. chinensis)*	मेदा लकड़ी
36	*Symplocos paniculata (S. crataegioides*	लोध
37	*Aconitum violaceum*	दुधिया पतिस
38	*Allium stracheyi*	फरना
39	*Bunium persicum*	काला जीरा
40	*Ephedra gerardiana*	सोमलता
41	*Hypericum peforatum*	बसंत
42	*Juniperus communis*	होबर
43	*Rheum australe (=R. emodi)*	रेवन चीनी
44	*Rheum webbianum*	रेवन चीनी
45	*Selinum coniifolium*	भूतकेसी
46	*Selinum vaginatum*	भूतकेसी
47	*Skimmia laureola*	नेर धूप

Source: Red list Status as per Shimla Conservation Assessment & Management Prioritization (CAMP), December, 2010

औषधीय पौध रोपण प्रदेश का नारा
प्रयास आपका सहयोग हमारा

हिमाचल प्रदेश में पाए जाने वाले मुर्ग प्रजाति के पक्षी (फिजैंट)

CHIR PHEASANT - चैहड़
(*Catreus walichii*)

HIMALAYAN MONAL - मोनाल
(*Lophophorus impejanus*)

WESTERN TRAGOPAN - जुजुराणा
(*Tragopan melanocephalus*)

RED JUNGLE FOWL - लाल जंगली मुर्गा
(*Galus galus murghi*)

KALIJ PHEASANT- कालीज़
(*Lophura leucomelanos*)

KOKLASS PHEASANT- कोकलास
(*Pucrasia macrolopha*)

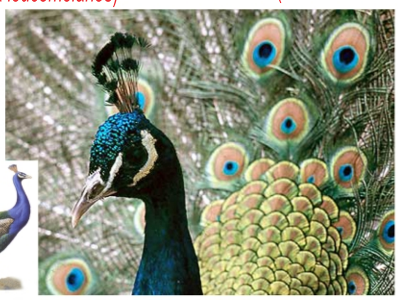

INDIAN PEAFOWL - मोर
(*Pavo caristatus*)